Notes

M.A-Political Science

Semester -2nd

Paper: Understanding B.R. Ambedkar

Paper Code - 24POL202MV01

Syllabus

Unit 1: Ambedkar Biographical Sketch- Childhood experience, Education Social Organization and Movement of Ambedkar- Formation of Bahishkrit Hitkarini Sabha-Aims,Objective and Achievements Mahad Satyagraha Temple Entry Movement. Samata Sainik Dal

Unit 2: Political Organization and Movement- Independent Labour Party. Scheduled Caste Federation. Republican Party of India.

Unit 3: Ambedkar's Theory of Cast Theory of Origin of Caste. Structure of Caste. Caste-Class Theory. Annihilation of Caste Theory of 'Broken Man Reconstruction of Social Structure

Unit 4: Ambedkar on Religion- Definitions and Philosophy of Religion. Relations between Religion, Manand Society. Declaration of religious conversion. Embracement of Buddhism. Ambedkar's role in Constitution-Making Economic Ideas of Ambedkar

Unit-I

डॉ. बी. आर अम्बेडकर की जीवनी- बचपन का अनुभव, शिक्षा

डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर सूबेदार रामजी मालोजी सकपाल के पुत्र थे। वे ब्रिटिश सेना में सूबेदार थे। बाबासाहेब के पिता संत कबीर के अनुयायी थे और पढ़े-लिखे व्यक्ति भी थे।

डॉ. भीमराव रामजी अंबेडकर की उम्र मुश्किल से दो साल थी जब उनके पिता सेवानिवृत्त हो गए। जब वे मात्र छह साल के थे, तब उनकी मां का निधन हो गया। बाबासाहेब ने अपनी प्रारंभिक शिक्षा बॉम्बे में प्राप्त की। स्कूल के दिनों से ही उन्हें इस बात का गहरा सदमा लगा कि भारत में अछूत होना क्या होता है।

डॉ. अंबेडकर **सतारा में अपनी स्कूली** शिक्षा ले रहे थे। दुर्भाग्य से डॉ. अंबेडकर ने अपनी मां को खो दिया। उनकी देखभाल उनकी मौसी ने की। इसके बाद वे बंबई चले गए। स्कूली शिक्षा के दौरान उन्हें अस्पृश्यता के अभिशाप से पीड़ित होना पड़ा। उनकी शादी **मैट्रिकुलेशन** के बाद 1907 में एक बाजार के खुले शेड में हुई थी।

डॉ. अंबेडकर ने बॉम्बे के **एलफिंस्टन कॉलेज से स्नातक** की पढ़ाई पूरी की, जिसके लिए उन्हें बड़ौदा के महामहिम सयाजीराव गायकवाड़ से छात्रवृत्ति मिल रही थी। स्नातक होने के बाद, उन्हें बांड के अनुसार बड़ौदा संस्थान में शामिल होना पड़ा। जब वे बड़ौदा में थे, तब उनके पिता का निधन हो गया, 1913 वह वर्ष है जब डॉ. अंबेडकर को उच्च शिक्षा के लिए अमेरिका जाने के लिए स्कॉलर के रूप में चुना गया था। यह उनके शैक्षणिक जीवन का महत्वपूर्ण मोड़ था।

उन्होंने **1915 और 1916 में क्रमशः कोलंबिया विश्वविद्यालय से एम.ए. और पी.एच.डी. की डिग्री प्राप्त की**। इसके बाद वे आगे की पढ़ाई के लिए लंदन चले गए। उन्हें वहां **ग्रेज़ इन(Grey's Inn)** में लॉ के लिए भर्ती कराया गया और **लंदन स्कूल ऑफ़ इकोनॉमिक्स एंड पॉलिटिकल साइंस में डी.एस.सी. (DSC)** की तैयारी करने की भी अनुमति दी गई। लेकिन उन्हें बड़ौदा के दीवान ने वापस भारत बुला लिया। बाद में, उन्होंने **बार-एट-लॉ (Bar at Law) और डी.एस.सी.** की डिग्री भी प्राप्त की। उन्होंने कुछ समय तक जर्मनी के बॉन विश्वविद्यालय में अध्ययन किया।

1916 में उन्होंने '**भारत में जातियाँ - उनका तंत्र, उत्पत्ति और विकास' (Castes in India — their Mechanism, Genesis, and Development')पर एक निबंध पढ़ा। 1916 में, उन्होंने अपना शोध प्रबंध 'भारत के लिए राष्ट्रीय लाभांश - एक ऐतिहासिक और विश्लेषणात्मक अध्ययन'** लिखा और अपनी पीएच.डी. की डिग्री प्राप्त की। यह आठ साल बाद शीर्षक के तहत प्रकाशित हुआ - "ब्रिटिश भारत में प्रांतीय वित्त का विकास।" फिर इस उच्चतम डिग्री को प्राप्त करने के बाद, वे भारत लौट आए और उन्हें भविष्य में वित्त मंत्री के रूप में तैयार करने के उद्देश्य से बड़ौदा के महाराजा के सैन्य सचिव के रूप में नियुक्त किया गया।

सितंबर 1917 में जब उनकी छात्रवृत्ति अवधि समाप्त हो गई तो बाबासाहेब शहर लौट आए और सेवा में शामिल हो गए। लेकिन नवंबर 1917 तक शहर में कुछ समय रहने के बाद वे मुंबई चले गए। अस्पृश्यता के आधार पर उनके साथ हुए दुर्व्यवहार ने उन्हें सेवा छोड़ने पर मजबूर कर दिया।

डॉ. अंबेडकर बंबई लौट आए और सिडेनहैम कॉलेज में राजनीतिक अर्थव्यवस्था के प्रोफेसर के रूप में शामिल हो गए। चूंकि वह बहुत पढ़े-लिखे थे, इसलिए वे छात्रों के बीच बहुत लोकप्रिय थे। लेकिन उन्होंने लंदन में कानून और अर्थशास्त्र की पढ़ाई फिर से शुरू करने के लिए अपने पद से इस्तीफा दे दिया। कोल्हापुर के महाराजा ने उन्हें आर्थिक मदद दी। 1921 में , उन्होंने अपनी थीसिस लिखी। 'ब्रिटिश भारत में शाही वित्त का प्रांतीय विकेंद्रीकरण' और लंदन विश्वविद्यालय से एम.एससी. की डिग्री प्राप्त की। फिर उन्होंने जर्मनी के बॉन विश्वविद्यालय में कुछ समय बिताया। 1923 में , उन्होंने डी.एससी. की डिग्री के लिए अपनी थीसिस - "**रुपये की समस्या, उसका उद्गम और समाधान (Problem of Rupee its Origin and Solution)**" प्रस्तुत की। 1923 में उन्हें बार में बुलाया गया ।

1924 में इंग्लैंड से वापस आने के बाद उन्होंने दलित वर्गों के कल्याण के लिए एक एसोसिएशन की शुरुआत की, जिसके अध्यक्ष सर चिमनलाल सीतलवाड़ और अध्यक्ष डॉ. अंबेडकर थे। शिक्षा का प्रसार करना, आर्थिक स्थिति में सुधार करना और दलित वर्गों की शिकायतों का प्रतिनिधित्व करना एसोसिएशन के तात्कालिक उद्देश्य थे।

नये सुधारों के मद्देनजर दलित वर्गों की समस्याओं को संबोधित करने के लिए 3 अप्रैल 1927 को बहिष्कृत भारत समाचार पत्र शुरू किया गया था ।

1928 में वे सरकारी लॉ कॉलेज, बम्बई में प्रोफेसर बने और 1 जून 1935 को वे उसी कॉलेज के प्रिंसिपल बने और 1938 में अपने त्यागपत्र देने तक उस पद पर बने रहे।

13 अक्टूबर 1935 को नासिक जिले के येओला में दलित वर्गों का प्रांतीय सम्मेलन आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में उन्होंने घोषणा करके हिंदुओं को चौंका दिया। "मैं हिंदू धर्म में पैदा हुआ हूं, लेकिन मैं हिंदू के रूप में नहीं मरूंगा।" उनके हजारों अनुयायियों ने उनके इस फैसले का समर्थन किया। 1936 में उन्होंने बॉम्बे प्रेसीडेंसी महार सम्मेलन को संबोधित किया और हिंदू धर्म के त्याग की वकालत की।

15 अगस्त 1936 को उन्होंने दलित वर्गों, जिनमें से अधिकांश श्रमिक आबादी थी, के हितों की रक्षा के लिए **स्वतंत्र लेबर पार्टी** का गठन किया।

1938 में कांग्रेस ने अछूतों के नाम में बदलाव करने के लिए एक विधेयक पेश किया। डॉ. अंबेडकर ने इसकी आलोचना की। उनके अनुसार नाम बदलना समस्या का समाधान नहीं है।

1942 में उन्हें भारत के गवर्नर जनरल की कार्यकारी परिषद में श्रम सदस्य के रूप में नियुक्त किया गया, 1946 में वे बंगाल से संविधान सभा के लिए चुने गए। उसी समय उन्होंने अपनी पुस्तक, हू वेयर शूद्राज़? प्रकाशित की।

स्वतंत्रता के बाद 1947 में उन्हें नेहरू की पहली कैबिनेट में विधि एवं न्याय मंत्री नियुक्त किया गया। लेकिन 1951 में उन्होंने कश्मीर मुद्दे, भारत की विदेश नीति और हिंदू कोड बिल के प्रति नेहरू की नीति पर मतभेद जताते हुए मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया।

1952 में कोलंबिया विश्वविद्यालय ने उन्हें भारत के संविधान के प्रारूपण के संबंध में उनके द्वारा किए गए कार्य के सम्मान में एल.एल.डी. की उपाधि प्रदान की। 1955 में उन्होंने थॉट्स ऑन लिंग्विस्टिक स्टेट्स नामक अपनी पुस्तक प्रकाशित की ।

डॉ. बी.आर. अंबेडकर को 12 जनवरी, 1953 को उस्मानिया विश्वविद्यालय से डॉक्टरेट की उपाधि से सम्मानित किया गया। अंततः 21 वर्षों के बाद, उन्होंने 1935 में येओला में जो घोषणा की थी , उसे सच साबित कर दिया कि “मैं हिंदू के रूप में नहीं मरूंगा”। 14 अक्टूबर 1956 को, उन्होंने नागपुर में एक ऐतिहासिक समारोह में बौद्ध धर्म अपना लिया और 6 दिसंबर 1956 को उनकी मृत्यु हो गई।

डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर को 1954 में नेपाल के काठमांडू में “जगतिक बौद्ध धर्म परिषद” में बौद्ध भिक्षुओं द्वारा “बोधिसत्व” की उपाधि प्रदान की गई थी। खास बात यह है कि डॉ. अंबेडकर को बोधिसत्व की उपाधि उनके जीवित रहते ही प्रदान की गई थी।

उन्होंने भारत के स्वतंत्रता संग्राम और स्वतंत्रता के बाद के सुधारों में भी योगदान दिया। इसके अलावा, बाबासाहेब ने भारतीय रिजर्व बैंक के गठन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। केंद्रीय बैंक का गठन बाबासाहेब द्वारा हिल्टन यंग कमीशन के समक्ष प्रस्तुत अवधारणा के आधार पर किया गया था।

डॉ. अंबेडकर का यह शानदार जीवन परिचय बताता है कि वे अध्ययनशील और कर्मशील व्यक्ति थे। सबसे पहले उन्होंने अर्थशास्त्र, राजनीति, कानून, दर्शनशास्त्र और समाजशास्त्र का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया, अपनी पढ़ाई के दौरान उन्हें कई सामाजिक बाधाओं का सामना करना पड़ा। लेकिन उन्होंने अपना पूरा जीवन पढ़ने-लिखने और पुस्तकालयों में बिताने में नहीं बिताया। उन्होंने आकर्षक वेतन वाले उच्च पदों को अस्वीकार कर दिया क्योंकि वे दलित वर्ग के अपने भाइयों को कभी नहीं भूले। उन्होंने अपना शेष जीवन समानता, भाईचारे और मानवता के लिए समर्पित कर दिया। उन्होंने दलित वर्गों के उत्थान के लिए अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास किया।

Δ निधन : 1955 में लम्बी बीमारी के कारण डॉ. अंबेडकर की तबीयत बिगड़ गई और 6 दिसंबर 1956 को दिल्ली में नींद में ही उनका निधन हो गया।

उनके जीवन-वृतांत को पढ़ने के बाद उनके प्रमुख योगदान और उनकी प्रासंगिकता का अध्ययन और विश्लेषण करना आवश्यक और उचित है। एक मत के अनुसार तीन बिंदु ऐसे हैं जो आज भी अधिक महत्वपूर्ण हैं। आज भी भारतीय अर्थव्यवस्था और भारतीय समाज कई आर्थिक और सामाजिक समस्याओं का सामना कर रहा है। डॉ. अंबेडकर के विचार और कार्य हमें इन समस्याओं के समाधान के लिए मार्गदर्शन कर सकते हैं।

डॉ. बी.आर. अंबेडकर की पुण्यतिथि को पूरे देश में महापरिनिर्वाण दिवस के रूप में मनाया जाता है।

डॉ. आंबेडकर जी की पुस्तकें एवं रचनाएं

Castes in India: Their Mechanism, Genesis and Development — 1916

Mook Nayak (weekly) — 1920

The Problem of the Rupee: its origin and its solution : 1923

Bahishkrut Bharat (India Ostracized) — 1927

Janta (weekly) —:1930

The Annihilation of Caste — 1936

Federation versus Freedom — 1939

Thoughts on Pakistan — 1940

Ranade, Gandhi and Jinnah — 1943

Mr. Gandhi and Emancipation of Untouchables - 1945

Pakistan or Partition of India - 1945

State and Minorities - 1947

Who were the Shudras - 1948

Maharashtra as a Linguistic Province — 1948

The Untouchables - 1948

Buddha or Karl Max — 1956

The Buddha and hid Dhamma - 1957

Riddles in Hinduism - 2008

Manu and the Shudras

What Congress and Gandhi have done to the Untouchables - 1945

अम्बेडकर द्वारा बनाए सामाजिक संगठन और आंदोलन-

1. बहिष्कृत हितकारिणी सभा का गठन- उद्देश्य, लक्ष्य और उपलब्धियां

2. महाड़ सत्याग्रह

3. मंदिर प्रवेश आंदोलन

4. समता सैनिक दल

1. बहिष्कृत हितकारिणी सभा

बहिष्कृत हितकारिणी सभा का गठन- उद्देश्य, लक्ष्य और उपलब्धियां

बहिष्कृत हितकारिणी सभा का गठन भारतीय समाज में दलितों और शोषित वर्गों के उत्थान के लिए एक ऐतिहासिक कदम था। इसका संबंध डॉ. भीमराव आंबेडकर से है, जिन्होंने दलितों के सामाजिक, शैक्षिक और राजनीतिक अधिकारों के लिए संघर्ष किया। नीचे इसका विस्तृत विवरण दिया गया है:

1. गठन:

स्थापना वर्ष: 20 जुलाई 1924

स्थान: बॉम्बे (अब मुंबई)

संस्थापक: डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर

बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना उस समय की गई जब भारत में दलित (तत्कालीन 'अछूत') वर्ग को समाज में समान अधिकार नहीं मिलते थे।

2. उद्देश्य:

दलितों के सामाजिक और शैक्षणिक उत्थान के लिए कार्य करना।

अछूतों को आत्मनिर्भर बनाना और उन्हें उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करना।

हिंदू समाज में व्याप्त छुआछूत की प्रथा को समाप्त करना।

शिक्षा के माध्यम से दलित वर्ग में आत्मसम्मान और जागरूकता लाना।

दलितों को राजनीतिक और सामाजिक संगठनों में भागीदारी दिलाना।

3. लक्ष्य:

शिक्षा: दलितों को शिक्षित बनाना ताकि वे समाज में बराबरी का दर्जा पा सकें।

सामाजिक सुधार: छुआछूत, जातिवाद और भेदभाव को खत्म करना।

राजनीतिक जागरूकता: दलितों को उनके अधिकारों के लिए संगठित करना और राजनीतिक रूप से सशक्त बनाना।

आर्थिक सुधार: दलित समुदाय को रोजगार, स्वरोजगार और अन्य आर्थिक अवसरों से जोड़ना।

4. उपलब्धियां:

i. शिक्षा के क्षेत्र में:

सभा ने दलित छात्रों की शिक्षा के लिए कई स्कूल, छात्रावास और पुस्तकालय खोले।

आर्थिक रूप से पिछड़े छात्रों को छात्रवृत्ति और सहायता प्रदान की गई।

शिक्षा के माध्यम से दलितों में आत्मविश्वास का संचार हुआ।

ii. सामाजिक सुधार के क्षेत्र में:

समाज में फैली छुआछूत की प्रथा के खिलाफ आवाज उठाई।

आंबेडकर द्वारा संगठित सभाओं, आंदोलनों और लेखों के माध्यम से लोगों को जागरूक किया गया।

दलितों को सार्वजनिक स्थलों, जलस्रोतों और मंदिरों में प्रवेश दिलाने की मांग उठाई गई।

iii. राजनीतिक क्षेत्र में:

सभा ने दलितों को राजनीतिक अधिकारों के प्रति सजग किया।

बाद में आंबेडकर ने इसी आधार पर राजनीतिक संगठनों की नींव रखी, जैसे "इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी" और "शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन"।

निष्कर्ष:

बहिष्कृत हितकारिणी सभा ने भारत में सामाजिक न्याय और समता की नींव रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस संस्था ने न केवल

दलितों को जागरूक किया, बल्कि उन्हें एक संगठित शक्ति के रूप में समाज के सामने लाकर खड़ा किया। यह सभा भारतीय दलित आंदोलन की दिशा तय करने वाली एक अग्रणी संस्था रही।

महाड़ सत्याग्रह

1927 में बी.आर. अंबेडकर द्वारा शुरू किया गया महाड़ सत्याग्रह , भारत में जातिगत भेदभाव को चुनौती देने के उद्देश्य से एक ऐतिहासिक आंदोलन था। यह महत्वपूर्ण विरोध दलित समुदाय के महाराष्ट्र के महाड़ में चावदार टैंक तक पहुँचने के अधिकार पर केंद्रित था , जिसे पारंपरिक रूप से उन्हें अस्वीकार कर दिया गया था।

सत्याग्रह दमनकारी जाति व्यवस्था के खिलाफ व्यापक संघर्ष का प्रतीक था और इसने दलितों के साथ हो रहे अन्याय की ओर ध्यान आकर्षित किया। सार्वजनिक रूप से टंकी से पानी पीकर, अंबेडकर और उनके अनुयायियों ने भारत में सामाजिक न्याय के लिए भविष्य के आंदोलनों को प्रेरित करते हुए, विद्रोह का एक साहसी कार्य किया।

महाड़ सत्याग्रह की पृष्ठभूमि

भारतीय जाति व्यवस्था ने ऐतिहासिक रूप से अछूतों , जिन्हें दलित के नाम से जाना जाता है , को अन्य हिंदू जातियों से अलग करके हाशिए पर रखा। इस अलगाव का मतलब था कि उन्हें सार्वजनिक जल निकायों और उच्च जातियों के उपयोग के लिए निर्दिष्ट सड़कों का उपयोग करने से प्रतिबंधित किया गया था।

अगस्त 1923 में, बम्बई विधान परिषद ने दलित वर्गों के अधिकारों की वकालत करते हुए एक प्रस्ताव पारित किया, जिसके तहत उन्हें सरकार द्वारा निर्मित और अनुरक्षित सुविधाओं तक पहुंच की अनुमति दी गयी।

इसके बाद, जनवरी 1924 में, बम्बई प्रांत के भाग महाड की नगरपालिका परिषद ने भी अधिनियम को लागू करने के लिए इसी प्रकार का प्रस्ताव पारित किया।

हालाँकि, इस प्रयास को सवर्ण हिंदुओं के कड़े विरोध का सामना करना पड़ा , जिसके कारण व्यावहारिक रूप से इसका क्रियान्वयन विफल हो गया।

महाड़ सत्याग्रह घटनाक्रम

20 मार्च, 1927 को डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने महाड से लगभग 2,500 दलितों के जुलूस का नेतृत्व करते हुए चावदार टैंक तक का सफर तय किया । चावदार टैंक एक सार्वजनिक जल स्रोत है, जहां से उन्हें ऐतिहासिक रूप से प्रतिबंधित किया गया था। विरोध के एक शक्तिशाली कदम के रूप में अंबेडकर ने टैंक से पानी निकाला और उसे पीया, जिससे सवर्ण हिंदू समुदाय में काफी विरोध हुआ।

बाद में दिसंबर 1927 में, अंबेडकर और उनके समर्थकों ने उसी स्थान पर प्रतीकात्मक रूप से ' मनुस्मृति ' को जलाया, जिससे जाति-आधारित असमानताओं की अस्वीकृति और सामाजिक न्याय की वकालत का संकेत मिला।

महाड़ सत्याग्रह का मुख्य उद्देश्य:

- अछूतों को सार्वजनिक जल स्रोतों का उपयोग करने का अधिकार दिलाना।
- जातिगत भेदभाव और अस्पृश्यता के विरुद्ध आवाज उठाना।
- सामाजिक समानता और सम्मान की स्थापना करना

महाड़ सत्याग्रह में भाग लेने वाले प्रमुख नेता:

1. **डॉ. भीमराव अंबेडकर – इस आंदोलन के मुख्य नेता और आयोजक।**
2. **जी.एन. सहस्रबुद्धे – एक प्रगतिशील ब्राह्मण समाज सुधारक जिन्होंने अंबेडकर का समर्थन किया।**
3. **सुरेंद्रनाथ टिपणिस – उस समय महाड़ नगरपालिका के अध्यक्ष, जिन्होंने दलितों के लिए तालाब खोलने में मदद की।**

4. **ए.ए. वाघमारे – अंबेडकर के सहयोगी और दलित अधिकारों के लिए सक्रिय कार्यकर्ता।**
5. **रामचंद्र बाबाजी मोरे – क्षेत्र के एक प्रमुख आयोजक और अंबेडकरवादी कार्यकर्ता।**

महाड़ सत्याग्रह विरासत/महत्व

महाड़ सत्याग्रह की विरासत बहुत बड़ी है, क्योंकि इसने भारत में जातिगत भेदभाव के खिलाफ लड़ाई में एक महत्वपूर्ण कदम उठाया। इसने भविष्य के आंदोलनों को प्रेरित किया और दलित सक्रियता के लिए एक संदर्भ बिंदु बन गया। इस घटना ने दलित समुदाय के अपने अधिकारों की मांग करने के संकल्प को भी मजबूत किया और आगे के सामाजिक सुधारों का मार्ग प्रशस्त किया। इसके स्थायी महत्व के प्रमाण के रूप में, 20 मार्च, सत्याग्रह का दिन, अब भारत में सामाजिक सशक्तिकरण दिवस के रूप में मनाया जाता है।

मंदिर प्रवेश आंदोलन

बी.आर. अंबेडकर द्वारा चलाए गए मंदिर प्रवेश आंदोलन

मंदिर प्रवेश आंदोलन को डॉ. बीआर अंबेडकर के नेतृत्व में नए सिरे से समर्थन और नेतृत्व मिला, जिन्होंने भारतीय समाज में जातिगत पूर्वाग्रहों को उजागर करने के लिए आंदोलन का नेतृत्व किया। उनके नेतृत्व में विभिन्न आंदोलनों में अंबादेवी मंदिर सत्याग्रह, पार्वती सत्याग्रह और कालाराम मंदिर प्रवेश आंदोलन शामिल थे। नीचे उनकी विस्तार से चर्चा की गई है:

अंबादेवी मंदिर सत्याग्रह (1927): 27 जून 1927 को डॉ. अंबेडकर और उनके अनुयायियों ने अमरावती में अंबादेवी मंदिर में धार्मिक परिसर में प्रवेश करने के लिए मार्च किया। उनके प्रयासों के बावजूद, वे असफल रहे क्योंकि उच्च जाति के हिंदुओं ने उनके प्रवेश का विरोध किया।

पार्वती सत्याग्रह (1929): 1929 में, डॉ. अम्बेडकर ने पुणे के पास पार्वती टेकड़ी पहाड़ी पर स्थित पार्वती मंदिर में दलितों के प्रवेश के लिए विरोध शुरू किया।

ब्राह्मणवादी पेशवाओं द्वारा निर्मित यह मंदिर सदियों तक केवल उच्च जातियों के लिए खुला था। मंदिर के निकाय को पत्र लिखने के बावजूद दलितों को फिर से प्रवेश से वंचित कर दिया गया।

कालाराम मंदिर प्रवेश आंदोलन (1930): कालाराम मंदिर प्रवेश आंदोलन, जिसे नासिक सत्याग्रह के रूप में भी जाना जाता है, भारत के दलित आंदोलन में एक महत्वपूर्ण घटना थी, जिसका नेतृत्व 1930 में डॉ. बीआर अंबेडकर ने किया था, जिसमें दलितों को महाराष्ट्र के नासिक में कालाराम मंदिर में प्रवेश करने और पूजा करने का अधिकार मांगा गया था

1927 में बीआर अंबेडकर द्वारा शुरू किए गए मंदिर प्रवेश आंदोलन का उद्देश्य निचली जाति के लोगों को मंदिरों में प्रवेश करने और मंदिर की सुविधाओं का उपयोग करने की अनुमति देना, जाति-आधारित प्रतिबंधों को चुनौती देना और सामाजिक समानता को बढ़ावा देना था। अंबेडकर ने जातिगत पूर्वाग्रहों को उजागर करने और सार्वजनिक स्थानों तक समान पहुँच सुनिश्चित करने के लिए 1927 और 1935 के बीच कई आंदोलनों का नेतृत्व किया।

अम्बेडकर के मंदिर प्रवेश आंदोलन के मुख्य पहलू:

शुरुआत:

अम्बेडकर ने 1927 में अपने महार जाति के अनुयायियों के साथ मिलकर यह आंदोलन शुरू किया।

दायरा:

यह आंदोलन केवल मंदिर प्रवेश तक ही सीमित नहीं था, बल्कि इसका उद्देश्य निम्न जाति के व्यक्तियों को मंदिर के कुओं और स्नान तालाबों जैसे अन्य सार्वजनिक स्थानों का उपयोग करने में सक्षम बनाना भी था।

उद्देश्य

डॉ. भीमराव अंबेडकर द्वारा **मंदिर प्रवेश आंदोलन के उद्देश्य**

डॉ. भीमराव अंबेडकर द्वारा मंदिर प्रवेश आंदोलन के उद्देश्य

मंदिर प्रवेश आंदोलन डॉ. भीमराव अंबेडकर के जातीय भेदभाव के खिलाफ संघर्ष का एक महत्वपूर्ण हिस्सा था। इसका मुख्य उद्देश्य था कि दलितों (उस समय 'अछूत' कहे जाने वाले वर्ग) को हिंदू मंदिरों में प्रवेश और पूजा करने का अधिकार दिलाया जाए, जो उन्हें सदियों से नहीं दिया गया था।

नीचे मंदिर प्रवेश आंदोलन के मुख्य **उद्देश्य** इस प्रकार हैं:

1. जातीय भेदभाव को समाप्त करना

- यह आंदोलन सीधे तौर पर अस्पृश्यता और दलितों को "अशुद्ध" मानने की मानसिकता को चुनौती देता था।

- डॉ. अंबेडकर मानते थे कि जब तक सामाजिक समानता नहीं मिलेगी, तब तक राजनीतिक अधिकारों का कोई मूल्य नहीं होगा।

2. धार्मिक अधिकारों की समानता सुनिश्चित करना

- हिंदू मंदिर सार्वजनिक धार्मिक स्थान होते हैं, लेकिन दलितों को उनसे दूर रखा जाता था।

- इस आंदोलन का उद्देश्य था कि दलितों को भी मंदिरों में प्रवेश, पूजा और प्रार्थना का समान अधिकार मिले।

3. मानव गरिमा की स्थापना करना

- मंदिर में प्रवेश न देना दलितों का सार्वजनिक अपमान था।

- आंदोलन के माध्यम से डॉ. अंबेडकर ने वंचित वर्गों की आत्म-सम्मान और गरिमा को पुनर्स्थापित करने का प्रयास किया।

4. दबे-वंचित वर्गों को संगठित करना

- यह आंदोलन दलितों को राजनीतिक और सामाजिक रूप से जागरूक करने का एक माध्यम था।

- इससे उन्हें अपनी सामूहिक शक्ति का एहसास हुआ और उन्होंने अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करना सीखा।

5. हिंदू समाज में सुधार लाना

- अंबेडकर का उद्देश्य हिंदू धर्म के भीतर फैले भेदभावपूर्ण प्रथाओं को खत्म करना था।

- मंदिर प्रवेश का मुद्दा ब्राह्मणवादी रूढ़िवाद के खिलाफ व्यापक संघर्ष का प्रतीक था।

6. व्यापक सामाजिक परिवर्तन की तैयारी

- यह आंदोलन भविष्य में आने वाले बड़े सामाजिक सुधारों (जैसे कि आरक्षण, शैक्षिक अधिकार, और बौद्ध धर्म में धर्मांतरण) की बुनियाद था।

- इससे संवैधानिक समानता की दिशा में एक मजबूत कदम रखा गया।

प्रभाव:

इस आंदोलन के कारण जाति-आधारित प्रतिबंधों को चुनौती देने में महत्वपूर्ण जीत मिली, विशेष रूप से त्रावणकोर और केरल जैसे क्षेत्रों में, जहां दलितों को मंदिरों और पवित्र अनुष्ठानों में प्रवेश से वंचित रखा गया था।

महत्व

अंबेडकर द्वारा चलाए गए मंदिर प्रवेश आंदोलन का महत्व

डॉ. बी.आर. अंबेडकर के नेतृत्व में मंदिर प्रवेश आंदोलन भारत के सामाजिक सुधार इतिहास में एक ऐतिहासिक घटना थी।

अंबेडकर द्वारा चलाए गए मंदिर प्रवेश आंदोलन का महत्व कुछ इस प्रकार है -

1. जातिगत भेदभाव को चुनौती

डॉ. अंबेडकर के आंदोलन ने सीधे तौर पर उस गहरी जड़ वाली जाति व्यवस्था को चुनौती दी, जिसने दलितों (तब "अछूत" कहलाए जाने वाले) को हिंदू मंदिरों में प्रवेश करने से रोक दिया था। इसने सामाजिक असमानता के धार्मिक औचित्य पर सवाल उठाया, रूढ़िवादी हिंदू प्रथाओं की नींव हिला दी।

2. समानता और मानवाधिकारों का दावा

यह आंदोलन दलितों की गरिमा और अधिकारों का एक शक्तिशाली दावा था। यह केवल मंदिरों में शारीरिक प्रवेश के बारे में नहीं था - यह सामाजिक समानता, न्याय और समान शर्तों पर आध्यात्मिकता तक पहुँच के लिए लड़ाई का प्रतीक था।

3. दलित चेतना का जागरण

अंबेडकर ने दलितों को संगठित होने, आंदोलन करने और खुद को शिक्षित करने के लिए प्रोत्साहित किया। यह आंदोलन समाज में अपने उचित स्थान की मांग करने के लिए उत्पीड़ित समुदायों के बीच एक बड़े जागरण का हिस्सा था।

4. राजनीतिक और सामाजिक लामबंदी

इसने हाशिए पर पड़े लोगों को एक साझा उद्देश्य के लिए एकजुट किया और भविष्य के दलित आंदोलनों और राजनीतिक दावे की नींव रखी। यह भारत में नागरिक अधिकारों के लिए सामूहिक लामबंदी का एक प्रारंभिक उदाहरण था।

5. प्रतिरोध का प्रतीक

मंदिर प्रवेश आंदोलन ब्राह्मणवादी प्रभुत्व के खिलाफ प्रतिरोध का प्रतीक बन गया और इसने पूरे भारत में इसी तरह के संघर्षों को प्रेरित किया, जैसे कि केरल में वैकोम और गुरुवायुर मंदिर प्रवेश आंदोलन।

समता सैनिक दल - डॉ. भीमराव अंबेडकर द्वारा गठित

परिचय

समता सैनिक दल (SSD), जिसका अर्थ है "समानता के सैनिकों की सेना", की स्थापना डॉ. भीमराव अंबेडकर ने 1927 में की थी। यह कोई राजनीतिक दल या धार्मिक संगठन नहीं था, बल्कि एक सामाजिक आंदोलन समूह था, जिसका उद्देश्य वंचितों को सशक्त बनाना, समानता को बढ़ावा देना, और दलितों व अन्य पिछड़े वर्गों को जातीय भेदभाव और सामाजिक अन्याय के खिलाफ संगठित करना था।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

20वीं सदी की शुरुआत में भारत में जाति व्यवस्था बहुत गहराई से जमी हुई थी। दलितों को ‘अछूत’ माना जाता था और वे भयंकर सामाजिक भेदभाव, बहिष्कार और हिंसा का शिकार होते थे। डॉ. अंबेडकर, जो स्वयं एक दलित परिवार में जन्मे थे, ने इस अन्याय को स्वयं झेला और अपने पूरे जीवन को जातिवाद मिटाने के लिए समर्पित कर दिया।

1927 में, डॉ. अंबेडकर ने महाड़ सत्याग्रह का नेतृत्व किया, जिसमें उन्होंने दलितों को सार्वजनिक जल स्रोत से पानी पीने का अधिकार दिलाया। इसी दौरान उन्हें यह अनुभव हुआ कि आंदोलन को सफल बनाने के लिए एक अनुशासित, संगठित और वैचारिक रूप से प्रशिक्षित कार्यकर्ता दल की आवश्यकता है — इसी उद्देश्य से समता सैनिक दल की स्थापना हुई।

समता सैनिक दल की स्थापना

- स्थापना वर्ष: 1927

- संस्थापक: डॉ. भीमराव अंबेडकर

- मुख्यालय: प्रारंभ में महाराष्ट्र, फिर धीरे-धीरे पूरे भारत में सक्रिय

- संबद्धता: अंबेडकर के आंदोलन से जुड़ा, जैसे कि शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन और रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया।

समता सैनिक दल के उद्देश्य

1. समानता और न्याय का प्रचार:
   - दलितों को उनके संवैधानिक अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं के प्रति जागरूक करना।
   - स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों को समाज में फैलाना।
2. वंचितों को संगठित करना:
   - दलित और अन्य पिछड़े वर्गों को एक संगठित आंदोलन के तहत एकजुट करना।
   - उनके भीतर सामूहिक शक्ति और आत्मसम्मान का भाव पैदा करना।
3. सुरक्षा और अनुशासन प्रदान करना:
   - SSD के कार्यकर्ता अंबेडकर की सभाओं में व्यवस्था बनाए रखने का कार्य करते थे।
   - सभी कार्यकर्ता यूनिफॉर्म पहनते थे और एक सैनिक की तरह अनुशासन में रहते थे।
4. नेतृत्व और आत्मविश्वास का विकास:
   - SSD के माध्यम से लोगों को नेतृत्व कौशल सिखाया जाता था।
   - समाज के दबे-कुचले वर्गों को आत्म-सम्मान और आत्म-विश्वास दिलाना।

गतिविधियाँ और कार्यप्रणाली

- वर्दीधारी स्वयंसेवक दल: SSD के सदस्य खाकी वर्दी पहनते थे और अनुशासन में रहते थे।

- ड्रिल और परेड: सामाजिक अनुशासन बनाए रखने हेतु शारीरिक अभ्यास और परेड करवाई जाती थीं।

- जन जागरूकता अभियान: अंबेडकर के विचारों को लोगों तक पहुंचाने के लिए भाषण, पुस्तिकाएं और कार्यक्रम आयोजित किए जाते थे।

- आंदोलनों में भागीदारी: सत्याग्रह, मंदिर प्रवेश आंदोलन, और अन्य सामाजिक आंदोलनों में SSD की महत्वपूर्ण भूमिका थी।

विरासत और वर्तमान स्थिति

- आज भी सक्रिय: आज भी SSD विशेष रूप से महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और अन्य राज्यों में सक्रिय है।

- महापुरुषों की जयंती पर भागीदारी: SSD के सदस्य डॉ. अंबेडकर जयंती, गणतंत्र दिवस, आदि पर बड़े कार्यक्रमों में हिस्सा लेते हैं।

- सशक्तिकरण का प्रतीक: SSD आज भी दलित एकता, आत्म-सम्मान, और सामाजिक न्याय के प्रतीक के रूप में माना जाता है।

निष्कर्ष

समता सैनिक दल, डॉ. भीमराव अंबेडकर की दूरदृष्टि का परिणाम था। उन्होंने केवल कानून और राजनीति के माध्यम से ही नहीं, बल्कि सामाजिक संगठन और सामूहिक चेतना के जरिए भी शोषित वर्गों के उत्थान के लिए कार्य किया। SSD ने दलित आंदोलन को आधार, अनुशासन और आत्मबल प्रदान किया।

Unit-II

राजनीतिक दल और आंदोलन (Political Organisation & Movement)

इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी (Independent Labour Party)

डॉ. भीमराव अंबेडकर द्वारा इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी (Independent Labour Party)

परिचय

इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी (ILP) एक राजनीतिक पार्टी थी जिसकी स्थापना डॉ. भीमराव अंबेडकर ने 15 अगस्त 1936 को की थी। यह भारत की पहली ऐसी राजनीतिक पार्टी थी, जो मजदूरों, किसानों और सामाजिक रूप से वंचित वर्गों — विशेष रूप से दलितों — के हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए बनाई गई थी।

इस पार्टी का उद्देश्य केवल जातीय मुक्ति नहीं, बल्कि आर्थिक और सामाजिक न्याय के व्यापक मुद्दों पर काम करना था।

पृष्ठभूमि और आवश्यकता

ILP की स्थापना से पहले डॉ. अंबेडकर दलितों के सामाजिक और कानूनी अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे थे। लेकिन उन्होंने महसूस किया कि केवल सामाजिक सुधार, जब तक उसके पीछे राजनीतिक शक्ति नहीं होगी, तब तक स्थायी बदलाव संभव नहीं है।

उस समय की अधिकांश राजनीतिक पार्टियाँ — विशेषकर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस — ने नीच जातियों और मजदूर वर्ग के मुद्दों को नज़रअंदाज़ किया। इसीलिए अंबेडकर ने एक ऐसी पार्टी की नींव रखी जो श्रमिकों, किसानों, और दलितों की आवाज़ बन सके।

स्थापना

- स्थापना तिथि: 15 अगस्त 1936

- संस्थापक: डॉ. भीमराव अंबेडकर

- मुख्यालय: बॉम्बे (अब मुंबई)

इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी (ILP) के प्रमुख नेता:

डॉ. बी. आर. अंबेडकर – संस्थापक और अध्यक्ष

एन. एस. काजरोलकर – प्रमुख नेता; बाद में सांसद बने

भैय्यासाहेब सुरवे – सक्रिय संगठनकर्ता

आर. डी. भंडारे – प्रमुख दलित नेता और पार्टी सदस्य

दादासाहेब रूपवाटे – अंबेडकर आंदोलन से जुड़े, ILP में सक्रिय भूमिका

बी. डी. खोब्रागड़े – ILP और बाद में रिपब्लिकन पार्टी के नेता

स्वतंत्र मज़दूर दल (ILP) के उद्देश्य

1. मजदूर वर्ग के अधिकारों की रक्षा करना

- औद्योगिक मजदूरों, खेतिहर श्रमिकों, और गरीब किसानों के हितों का प्रतिनिधित्व करना।

- बेहतर वेतन, कार्य स्थितियों और नौकरी की सुरक्षा की माँग करना।

2. दलितों और वंचित वर्गों को राजनीतिक मंच देना

- उन वर्गों को आवाज़ देना जिन्हें मुख्यधारा की पार्टियों ने अनदेखा किया।

- अस्पृश्यता, जातीय भेदभाव और सामाजिक अन्याय का विरोध करना।

3. समाजवाद और आर्थिक समानता को बढ़ावा देना

- पूंजीपति और ज़मींदार वर्ग की सत्ता को चुनौती देना।

- ज़मीन सुधार, उद्योगों का राष्ट्रीयकरण, और संसाधनों के समान वितरण की माँग करना।

4. न्यायपूर्ण और समान समाज की स्थापना करना

- स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के मूल्यों को अपनाना।

- जाति व्यवस्था और उत्पीड़न से मुक्त समाज बनाना।

5. ब्राह्मणवादी रूढ़िवाद और सांप्रदायिकता का विरोध करना

- उन विचारधाराओं का विरोध करना जो जातीय विशेषाधिकारों और धार्मिक वर्चस्व को बनाए रखना चाहती थीं।

राजनीतिक उपलब्धियाँ

- 1937 के बॉम्बे प्रांतीय चुनावों में ILP ने 17 में से 14 सीटें जीतीं।

- डॉ. अंबेडकर को बॉम्बे विधान सभा में विपक्ष के नेता का दर्जा मिला।

- ILP ने औद्योगिक विवाद अधिनियम (Industrial Disputes Act) जैसे मज़दूर-विरोधी कानूनों का कड़ा विरोध किया।

- इसने महार वतन प्रणाली (वंशानुगत सेवाओं की प्रथा) और खेतिहर मज़दूरों को ज़मीन अधिकार दिलाने की मांग की।

ILP का महत्व

- ILP भारत की पहली आधुनिक राजनीतिक पार्टी थी जिसने श्रमिक आंदोलन और जाति-विरोधी संघर्ष को एक साथ जोड़ा।

- इसने दिखाया कि जाति और वर्ग के मुद्दे एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं।

- पार्टी ने दलितों के बीच राजनीतिक और वर्ग चेतना जगाई और भविष्य में बनने वाली पार्टियों जैसे कि शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन (1942) और रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (1957) के लिए रास्ता तैयार किया।

पतन और विरासत

- 1942 में, अंबेडकर ने ILP को भंग कर दिया और शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन (SCF) की स्थापना की, जो खास तौर पर दलितों की राजनीतिक हिस्सेदारी पर केंद्रित थी।

- हालांकि ILP का जीवनकाल कम था, लेकिन इसने दलित राजनीतिक चेतना की नींव रखी।

- इसे एक ऐसे आंदोलन के रूप में याद किया जाता है जिसने सामाजिक न्याय और श्रमिक अधिकारों को एक मंच पर लाया।

निष्कर्ष

इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी (ILP) डॉ. अंबेडकर की एक दूरदर्शी पहल थी, जिसमें उन्होंने सामाजिक रूप से वंचित और आर्थिक रूप से शोषित वर्गों को एक राजनीतिक मंच पर एकजुट किया। ILP ने यह संदेश दिया कि सामाजिक मुक्ति और आर्थिक न्याय एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं।

अनुसूचित जाति संघ (Scheduled Caste Federation)

शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन

शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन (SCF) डॉ. भीमराव अंबेडकर द्वारा जुलाई 1942 में स्थापित एक महत्वपूर्ण राजनीतिक संगठन था। इसका गठन उन्होंने इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी (ILP) से मिली निराशा के बाद किया, क्योंकि ILP जातिगत समस्याओं को पूरी तरह से हल नहीं कर पा रही थी।

यहाँ SCF का विस्तृत विवरण दिया गया है:

1. **पृष्ठभूमि और आवश्यकता**

1937 के चुनावों में ILP की सफलता के बाद भी डॉ. अंबेडकर ने महसूस किया कि केवल श्रमिक अधिकारों पर ध्यान केंद्रित करने से दलितों की मूल समस्याएं हल नहीं हो रहीं। भारत में दलितों को अब भी गहरी जातीय भेदभाव का सामना करना पड़ रहा था। इसी कारण उन्होंने ILP को भंग कर एक जाति-विशेष संगठन Scheduled Castes Federation (SCF) की स्थापना की।

2. **SCF की स्थापना**

- स्थापना: जुलाई 1942

- संस्थापक और अध्यक्ष: डॉ. बी. आर. अंबेडकर

- उद्देश्य: अनुसूचित जातियों के लिए स्वतंत्र राजनीतिक प्रतिनिधित्व और अधिकारों की रक्षा

- मुख्यालय: बॉम्बे (अब मुंबई)

अनुसूचित जाति महासंघ (एससीएफ) भारत में एक महत्वपूर्ण संगठन था, जिसकी स्थापना 1942 में डॉ. बी.आर. अंबेडकर और एन. शिवराज ने दलित समुदाय के अधिकारों की वकालत करने के लिए की थी। यहाँ कुछ प्रमुख नेता हैं:

अनुसूचित जाति संघ के प्रमुख नेता

- **संस्थापक नेता**:

- **बी.आर. अंबेडकर:** एक प्रसिद्ध न्यायविद, अर्थशास्त्री और समाज सुधारक जिन्होंने भारत के संविधान का मसौदा तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

- **एन. शिवराज:** मद्रास राज्य के एक प्रमुख नेता जिन्होंने अखिल भारतीय अनुसूचित जाति महासंघ के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया।

- **पी.एन. राजभोज:** बॉम्बे राज्य से, जिन्होंने एआईएससीएफ के महासचिव के रूप में कार्य किया।

- **अन्य उल्लेखनीय नेता:**

- पी.टी. मधले: एआईएससीएफ के संस्थापक सदस्य।

- रेट्टामलाई श्रीनिवासन: मद्रास डिप्रेस्ड क्लासेस फेडरेशन में एक प्रमुख व्यक्ति, जो बाद में एससीएफ का हिस्सा बन गया।

- दादासाहेब गायकवाड़: एक नेता जिन्होंने बाद में रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया के गठन में भूमिका निभाई, जो एससीएफ से उभरी।

- यशवंत अंबेडकर: डॉ. अंबेडकर के पुत्र, जो राजनीति में भी शामिल हुए और रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया का हिस्सा थे।

SCF का उद्देश्य पूरे भारत के दलितों को एकजुट कर, उन्हें राजनीतिक रूप से जागरूक और संगठित करना था ताकि वे खुद के प्रतिनिधि चुन सकें और अपने अधिकारों के लिए आवाज़ उठा सकें।

अनुसूचित जाति संघ (शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन) एक राजनीतिक संगठन था जिसकी स्थापना 1942 में बी.आर. अम्बेडकर द्वारा की गई थी। इसका मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जातियों के अधिकारों की रक्षा करना और उनके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विकास को बढ़ावा देना था।

उद्देश्य

अनुसूचित जाति संघ के मुख्य उद्देश्यों में शामिल थे:

1. अनुसूचित जातियों के अधिकारों की रक्षा : संघ ने अनुसूचित जातियों के अधिकारों की रक्षा के लिए लड़ाई लड़ी और उनके हितों की प्राप्ति के लिए काम किया।

2 सामाजिक और आर्थिक विकास : संघ ने अनुसूचित जातियों के सामाजिक और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए काम किया।

3. राजनीतिक प्रतिनिधित्व : संघ ने अनुसूचित जातियों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को बढ़ावा देने के लिए काम किया।

अनुसूचित जाति संघ ने भारतीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और अनुसूचित जातियों के अधिकारों की रक्षा के लिए लड़ाई लड़ी।

विचारधारा

- अनुसूचित जातियों को राजनीतिक प्रतिनिधित्व दिलाना

- अस्पृश्यता और जातीय भेदभाव का समूल नाश

- शिक्षा, रोजगार और राजनीति में दलितों को समान अवसर

- दलितों की एक स्वतंत्र राजनीतिक पहचान बनाना, जो कांग्रेस या सवर्ण नेतृत्व पर निर्भर न हो

डॉ. अंबेडकर का मानना था कि राजनीतिक शक्ति के बिना सामाजिक मुक्ति असंभव है।

गतिविधियाँ और राजनीतिक भूमिका

- 1946 के चुनाव: SCF ने केंद्रीय विधान सभा चुनाव में भाग लिया, लेकिन केवल 148 में से 2 सीटें ही जीत पाई। अंबेडकर खुद बॉम्बे से चुनाव हार गए।

- हालांकि चुनाव में सफलता नहीं मिली, लेकिन SCF ने दलित समुदाय को राजनीतिक रूप से जागरूक किया और उन्हें संगठित किया।

- SCF ने आरक्षण, अल्पसंख्यक अधिकारों और संविधान में दलितों की सुरक्षा की माँगों को मजबूती से उठाया।

अनुसूचित जाति संघ (एससीएफ) के प्रभाव:

राजनीतिक प्रभाव

अनुसूचित जाति संघ ने अनुसूचित जातियों के लिए राजनीतिक प्रतिनिधित्व में वृद्धि की दिशा में काम किया, जिससे उनकी आवाज़ को

मजबूत बनाने में मदद मिली।

सामाजिक सुधार

अनुसूचित जाति संघ एससीएफ ने सामाजिक सुधार की दिशा में काम किया, जिससे अनुसूचित जातियों के जीवन में सुधार हुआ और उनके अधिकारों की रक्षा हुई।

शिक्षा और रोजगार में अवसर

अनुसूचित जाति संघ (एससीएफ) ने अनुसूचित जातियों के लिए शिक्षा और रोजगार में अवसर बढ़ाने के लिए काम किया, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ।

संविधान में प्रावधान

एससीएफ के प्रयासों के परिणामस्वरूप, भारतीय संविधान में अनुसूचित जातियों के लिए विशेष प्रावधान किए गए, जिससे उनके अधिकारों की रक्षा हुई।

आजीविका और भूमि अधिकार

एससीएफ ने अनुसूचित जातियों के लिए आजीविका और भूमि अधिकारों की दिशा में काम किया, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ।

एससीएफ के प्रभाव से अनुसूचित जातियों के जीवन में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया और उनके अधिकारों की रक्षा हुई।

अनुसूचित जाति संघ (एससीएफ) के प्रयासों के परिणाम:

राजनीतिक प्रतिनिधित्व में वृद्धि

अनुसूचित जाति संघ ने अनुसूचित जातियों के लिए राजनीतिक प्रतिनिधित्व में वृद्धि की दिशा में काम किया।

शिक्षा और रोजगार में अवसर

अनुसूचित जाति संघ ने अनुसूचित जातियों के लिए शिक्षा और रोजगार में अवसर बढ़ाने के लिए काम किया।

सामाजिक न्याय और समानता

अनुसूचित जाति संघ ने सामाजिक न्याय और समानता की दिशा में काम किया, जिससे अनुसूचित जातियों के अधिकारों की रक्षा हुई।

संविधान में प्रावधान

अनुसूचित जाति संघ के प्रयासों के परिणामस्वरूप, भारतीय संविधान में अनुसूचित जातियों के लिए विशेष प्रावधान किए गए।

आजीविका और भूमि अधिकार

अनुसूचित जाति संघ ने अनुसूचित जातियों के लिए आजीविका और भूमि अधिकारों की दिशा में काम किया।

इन प्रयासों के परिणामस्वरूप, अनुसूचित जातियों के जीवन में सुधार हुआ और उनके अधिकारों की रक्षा हुई।

5. पतन और विरासत

- कांग्रेस जैसी बड़ी पार्टी की तुलना में SCF जनाधार नहीं बना पाई।

- संगठन में आंतरिक मतभेद और संसाधनों की कमी भी कारण बनी।

- 1956 में अंबेडकर के निधन के बाद, SCF का प्रभाव धीरे-धीरे कम हो गया।

हालाँकि, SCF ने 1957 में रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (RPI) के गठन की नींव रखी, जो अंबेडकर की राजनीतिक विरासत को आगे बढ़ाने का प्रयास था।

6. भारतीय राजनीति में महत्व

- SCF भारत का पहला राजनीतिक संगठन था जो पूरी तरह दलित अधिकारों को समर्पित था।

- इसने सामाजिक सुधार से आगे बढ़कर राजनीतिक संघर्ष की शुरुआत की।

- इससे प्रेरित होकर आगे चलकर बहुजन समाज पार्टी (BSP) जैसे कई दलित आंदोलन और पार्टियाँ उभरीं।

रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (Republican Party of India)

रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (आरपीआई , जिसे अक्सर रिपब्लिकन पार्टी या सिर्फ़ रिपब्लिकन कहा जाता है) भारत में एक राजनीतिक पार्टी थी। इसकी जड़ें एन. शिवराज और बीआर अंबेडकर के नेतृत्व वाले अखिल भारतीय अनुसूचित जाति महासंघ में थीं । पार्टी की स्थापना डॉ. बीआर अंबेडकर ने 1956 में की थी, जो रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (आरपीआई) के लिए एक प्रवेश बिंदु के रूप में काम करने वाली थी।

30 सितंबर 1956 को बीआर अंबेडकर ने "अनुसूचित जाति महासंघ" को भंग करके "रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया" की स्थापना की घोषणा की थी, लेकिन पार्टी के गठन से पहले ही 6 दिसंबर 1956 को उनकी मृत्यु हो गई। उसके बाद उनके अनुयायियों और कार्यकर्ताओं ने इस पार्टी के गठन की योजना बनाई। पार्टी की स्थापना के लिए 1 अक्टूबर 1957 को नागपुर में प्रेसीडेंसी की बैठक हुई। इस बैठक में एन. शिवराज , यशवंत अंबेडकर , पीटी बोराले, एजी पवार, दत्ता कट्टी, दादासाहेब रूपवते , अब्बा पीटी मधले मौजूद थे। 3 अक्टूबर 1957 को रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया का गठन किया गया। एन. शिवराज पार्टी के अध्यक्ष चुने गए।

1957 में पार्टी के छह सदस्य दूसरी लोकसभा के लिए चुने गए । यह अंबेडकर की पार्टी की अब तक की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया

संस्थापक: दादासाहब गायकवाड ,एन. शिवराज ,यशवन्त अम्बेडकर ,पीटी बोराले,एजी पवार, दत्ता कट्टी,

दादासाहब रूपवते , अब्बा पीटी मधाले

स्थापना : 3 अक्टूबर 1957

मूल संगठन (जो पहले था) : अनुसूचित जाति संघ

भारतीय रिपब्लिकन पार्टी (आरपीआई) एक राजनीतिक दल है जिसकी स्थापना 1957 में बी.आर. अम्बेडकर ने की थी, जो भारतीय संविधान के मुख्य वास्तुकार थे। इस पार्टी का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के हितों को बढ़ावा देना है, साथ ही साथ अन्य वंचित समुदायों के हितों की रक्षा करना भी है [1]।

विचारधारा

आरपीआई की विचारधारा सामाजिक न्याय, समानता, और मानवाधिकारों के सिद्धांतों पर आधारित है। पार्टी का उद्देश्य वंचित समुदायों के कल्याण को बढ़ावा देना और सामाजिक और आर्थिक असमानता के खिलाफ लड़ना है [1]।

प्रमुख उद्देश्य

1. सामाजिक न्याय: आरपीआई का उद्देश्य सभी नागरिकों के लिए सामाजिक न्याय और समानता को बढ़ावा देना है, विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए।

2. आर्थिक सशक्तिकरण: पार्टी का उद्देश्य शिक्षा, रोजगार, और उद्यमिता के माध्यम से वंचित समुदायों के आर्थिक सशक्तिकरण को बढ़ावा देना है।

3. मानवाधिकार: आरपीआई का उद्देश्य मानवाधिकारों की रक्षा और promotion करना है, विशेष रूप से वंचित समुदायों के लिए।

प्रमुख नेता

1. बी.आर. अम्बेडकर: आरपीआई के संस्थापक और भारतीय संविधान के मुख्य वास्तुकार।

2. प्रकाश अम्बेडकर: बी.आर. अम्बेडकर के पोते और आरपीआई के एक प्रमुख नेता।

3. रामदास अठावले: आरपीआई के एक प्रमुख नेता और भारतीय संसद के सदस्य।

चुनावी प्रदर्शन

आरपीआई ने भारतीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज की है, विशेष रूप से महाराष्ट्र राज्य में। पार्टी ने भारतीय संसद और राज्य विधानसभाओं में कई सीटें जीती हैं [1]।

चुनौतियाँ

1. विभाजन: आरपीआई ने कई वर्षों से विभाजन का सामना किया है, जिसमें कई छोटे समूह उभरे हैं।

2. प्रतिस्पर्धा: पार्टी को अन्य राजनीतिक दलों से प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है, विशेष रूप से भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (आईएनसी)।

3. सीमित संसाधन: आरपीआई के पास अन्य प्रमुख राजनीतिक दलों की तुलना में सीमित संसाधन हैं [1]।

रिपब्लिकन पार्टी में गुट या विभाजन

रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (RPI) ने अपनी स्थापना के बाद से ही महत्वपूर्ण परिवर्तन किए हैं। 1957 में बी.आर. अंबेडकर द्वारा स्थापित इस पार्टी का उद्देश्य अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के हितों को बढ़ावा देना था। समय के साथ, पार्टी में गंभीर आंतरिक कलह का सामना करना पड़ा, जिसके कारण कई अलग-अलग गुट बन गए।

आज, RPI के 50 से अधिक गुट हैं, जिनमें से प्रत्येक का अपना एजेंडा है।

कुछ **उल्लेखनीय गुट** इस प्रकार हैं:

- **रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (अठावले)**: रामदास अठावले के नेतृत्व वाले इस गुट की महाराष्ट्र में महत्वपूर्ण उपस्थिति है। - रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (गवई): आर.एस. गवई द्वारा स्थापित इस गुट का महाराष्ट्र में भी मजबूत आधार है। -

भारिपा बहुजन महासंघ: प्रकाश अंबेडकर के नेतृत्व वाला यह गुट एक और प्रमुख अलग गुट है।

अनेक चुनौतियों का सामना करने के बावजूद, आरपीआई भारतीय राजनीति में, विशेष रूप से महाराष्ट्र में, एक महत्वपूर्ण शक्ति बनी हुई है। हालाँकि, इसके विखंडन ने इसके समग्र प्रभाव को कम कर दिया है।

अन्य गुट

रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया(यूनाइटेड)

राष्ट्रीय रिपब्लिकन पार्टी

रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया(एस)

भारतीय रिपब्लिकन पार्टी (आरपीआई) के **परिणाम और प्रभाव** इस प्रकार हैं:

आरपीआई के परिणाम

1. अनुसूचित जातियों और जनजातियों के हितों की रक्षा: आरपीआई ने अनुसूचित जातियों और जनजातियों के हितों की रक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

2. सामाजिक न्याय और समानता की लड़ाई: आरपीआई ने सामाजिक न्याय और समानता की लड़ाई में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

3. महाराष्ट्र में प्रभाव: आरपीआई का महाराष्ट्र में अभी भी प्रभाव है, लेकिन इसका प्रभाव कमजोर पड़ गया है।

4. विभाजन: आरपीआई का विभाजन हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप 50 से अधिक गुट बन गए हैं।

5. कमजोर पड़ना: आरपीआई का प्रभाव कमजोर पड़ गया है क्योंकि इसके विभिन्न गुटों के बीच मतभेद हैं।

आरपीआई (रिपब्लिकन पार्टी ऑफ़ इंडिया) के प्रभाव

1. सामाजिक न्याय और समानता: आरपीआई ने सामाजिक न्याय और समानता की लड़ाई में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

2. अनुसूचित जातियों और जनजातियों के अधिकार: आरपीआई ने अनुसूचित जातियों और जनजातियों के अधिकारों की रक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

3. महाराष्ट्र की राजनीति: आरपीआई ने महाराष्ट्र की राजनीति में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

4. दलित आंदोलन: आरपीआई ने दलित आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

5. भारतीय राजनीति: आरपीआई ने भारतीय राजनीति में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

Unit-III

डॉ. बी. आर. अंबेडकर का जाति की उत्पत्ति का सिद्धांत

परिचय

डॉ. भीमराव अंबेडकर, भारतीय संविधान के शिल्पकार और एक महान समाज सुधारक थे। उन्होंने भारतीय समाज में जाति व्यवस्था की उत्पत्ति और विकास का गहन और क्रांतिकारी विश्लेषण प्रस्तुत किया। अंबेडकर ने जाति को केवल धार्मिक या सांस्कृतिक समस्या नहीं माना, बल्कि इसे एक सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक अन्याय के रूप में देखा।

1. जाति एक सामाजिक रचना है, प्राकृतिक विभाजन नहीं

अंबेडकर ने इस विचार को पूरी तरह से नकारा कि जाति भारतीय समाज का स्वाभाविक या जैविक हिस्सा है। उन्होंने कहा कि:

- जाति मानव निर्मित है, यह समाज को एक कठोर और स्थायी ढांचे में बाँधती है।

- यह जन्म आधारित पहचान देती है, जिसमें कोई सामाजिक या आर्थिक गतिशीलता नहीं होती।

- इसके विपरीत, वर्ग (class) में परिवर्तन संभव है—व्यक्ति मेहनत या संपत्ति से ऊपर उठ सकता है, लेकिन जाति में नहीं।

2. अंतर्जातीय विवाह निषेध (Endogamy) : जाति की उत्पत्ति का मूल कारण

अंबेडकर के अनुसार, अंतर्जातीय विवाह का निषेध ही जाति की उत्पत्ति का मूल है।

डॉ. बी.आर. अंबेडकर का जाति की उत्पत्ति का सिद्धांत जाति व्यवस्था की अनिवार्य विशेषता के रूप में अंतर्विवाह या अपनी ही जाति में विवाह करने की प्रथा की भूमिका पर जोर देता है। अंबेडकर के अनुसार, बहिर्विवाह पर अंतर्विवाह का अधिरोपण जातियों के निर्माण की ओर ले जाता है।

उन्होंने तर्क दिया कि **सजातीय विवाह को निम्न रीति-रिवाजों** के माध्यम से कायम रखा गया:

- **सती**: विधवा को उसके मृत पति के साथ जला देना

- **विधवा अवस्था बनाए रखना:** विधवाओं को दोबारा शादी करने से रोकना

- **विधुरों पर ब्रह्मचर्य थोपना**: विधुरों को दोबारा शादी करने से रोकना

- **बाल विवाह:** जातिगत शुद्धता बनाए रखने के लिए कम उम्र में विवाह की व्यवस्था करना

उनका मुख्य तर्क:

- ब्राह्मणों ने सबसे पहले अपनी जाति की "शुद्धता" बनाए रखने के लिए अंतर्जातीय विवाह पर रोक लगाई।

- इस चलन को अन्य वर्गों ने भी अपनाया, जिससे समाज कई बंद, जन्म आधारित समूहों में बंट गया, जिन्हें हम जातियाँ कहते हैं।

- उन्होंने कहा: “जाति व्यवस्था का तंत्र अंतर्जातीय विवाह है।”

3. ब्राह्मणों द्वारा जाति व्यवस्था की शुरुआत

अंबेडकर ने विश्लेषण किया कि ब्राह्मणों ने सबसे पहले खुद को अन्य वर्गों से अलग किया:

- उन्होंने स्वयं को धार्मिक और आध्यात्मिक रूप से श्रेष्ठ बताया।

- शादी और सामाजिक संबंधों को सीमित किया।

- धार्मिक ग्रंथों के माध्यम से अपनी श्रेष्ठता को न्यायोचित ठहराया।

यह "सामाजिक बंदीकरण" (Social Closure) था, जिससे जाति व्यवस्था की शुरुआत हुई।

4. जाति: सामाजिक विभाजन की प्रक्रिया

अंबेडकर ने इस विचार को खारिज किया कि जाति व्यवस्था कुशलता पर आधारित श्रम विभाजन है।

उन्होंने कहा:

- जाति **श्रम का विभाजन नहीं**, बल्कि **श्रमिकों का विभाजन** है।

- यह व्यक्ति के कौशल या योग्यता के आधार पर नहीं, बल्कि जन्म के आधार पर उसकी भूमिका तय करती है।

- इससे व्यक्तिगत स्वतंत्रता, प्रतिभा और विकास की पूरी संभावना नष्ट हो जाती है।

5. धर्म और शास्त्रों की भूमिका

अंबेडकर ने हिंदू धर्मग्रंथों को जाति व्यवस्था के लिए जिम्मेदार और दोषी ठहराया।

विशेष रूप से उन्होंने इन ग्रंथों की आलोचना की:

- **मनुस्मृति**: जो लोगों के कर्तव्य, अधिकार और दंड जाति के आधार पर तय करती है।

- **पुरुष सूक्त (ऋग्वेद)**: जिसमें कहा गया है कि ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से, क्षत्रिय भुजाओं से, वैश्य जांघों से और शूद्र पैरों से उत्पन्न हुए।

उन्होंने कहा कि ये पौराणिक कहानियाँ जाति व्यवस्था को धार्मिक वैधता देती हैं।

6. जाति और अस्पृश्यता

अंबेडकर ने अस्पृश्यता को जातिवाद की सबसे अमानवीय और घिनौनी अवस्था बताया।

- दलितों को मंदिर, शिक्षा, सार्वजनिक सुविधाओं से वंचित किया गया।

- उन्हें अपवित्र और अछूत माना गया।

- उन्होंने कहा कि अस्पृश्यता जाति व्यवस्था की चरम परिणति है, न कि कोई अलग व्यवस्था।

7. सामाजिक और राजनीतिक प्रभाव

अंबेडकर के अनुसार, जाति व्यवस्था:

- **समाजविरोधी (Anti-social)** है: यह समाज को विभाजित करती है और एकता को तोड़ती है।

- **लोकतंत्रविरोधी (Anti-democratic)** है: यह समानता और स्वतंत्रता को नकारती है।

- **राष्ट्रविरोधी (Anti-national)** है: यह भारत को एक राष्ट्र बनने से रोकती है।

उन्होंने कहा कि जब तक जाति नष्ट नहीं होती, तब तक सच्चा लोकतंत्र असंभव है।

8. जाति का उन्मूलन (Annihilation of Caste)

1936 में अपने प्रसिद्ध भाषण "**जाति का उन्मूलन" (Annihilation of Caste)** में अंबेडकर ने कहा:

- केवल सुधार पर्याप्त नहीं हैं, जाति को पूरी तरह नष्ट करना होगा।

- उन्होंने हिंदू धर्म की मूलभूत आलोचना की और कहा कि जब तक धर्म में जाति को वैधता मिलती रहेगी, तब तक समानता नहीं आ सकती।

- अंततः, उन्होंने 1956 में बौद्ध धर्म अपना लिया, ताकि वे एक ऐसा धर्म स्वीकार करें जो समानता, करुणा और तर्क पर आधारित हो।

निष्कर्ष

डॉ. अंबेडकर का जाति सिद्धांत भारतीय समाज की गहरी असमानताओं का विश्लेषण करता है। उनका मानना था कि:

- जाति कोई प्राकृतिक व्यवस्था नहीं, बल्कि मानव निर्मित सामाजिक अन्याय है।

- इसका उद्देश्य कुछ वर्गों को विशेषाधिकार देना और बहुसंख्यक को दमन और अपमान देना है।

- जाति व्यवस्था को खत्म किए बिना सामाजिक न्याय और लोकतंत्र संभव नहीं है।

उनके विचार आज भी समानता, न्याय और स्वतंत्रता की लड़ाई में प्रेरणा देता है।

जाति का संगठन (Structure of Caste)

अंबेडकर जाति व्यवस्था को एक **पदानुक्रमित सामाजिक संरचना** के रूप में देखते थे जो **श्रम को विभाजित करती** है, असमानता की एक श्रेणीबद्ध प्रणाली बनाती है, और सजातीय विवाह के माध्यम से सामाजिक अलगाव को बनाए रखती है। उनका मानना था कि यह भारतीय

समाज का एक गहरा जड़ पहलू है जो विशेष रूप से दलितों के खिलाफ भेदभाव और उत्पीड़न का कारण बनता है। अंबेडकर का लक्ष्य "जाति का विनाश" था, जो जाति-आधारित भेदभाव और असमानता से मुक्त समाज की वकालत करता था।

जाति व्यवस्था के संगठन पर अम्बेडकर के दृष्टिकोण का अधिक विस्तृत विवरण यहां दिया गया है:

प्रमुख विशेषताऐं:

पदानुक्रमिक संरचना:

अम्बेडकर ने माना कि जाति व्यवस्था सिर्फ श्रम का विभाजन नहीं बल्कि एक श्रेणीबद्ध पदानुक्रम है, जहां कुछ जातियों को श्रेष्ठ और अन्य को निम्न माना जाता है।

श्रम विभाजन:

उन्होंने कहा कि जाति व्यवस्था विभिन्न जातियों को विशिष्ट व्यवसाय सौंपती है, जो प्रायः व्यक्तिगत पसंद या योग्यता के बजाय जन्म के आधार पर होता है।

अंतर्विवाह और सामाजिक पृथक्करण:

अम्बेडकर ने जाति व्यवस्था को बनाए रखने और विभिन्न समूहों के बीच अंतर्विवाह को रोकने में अंतर्विवाह (अपनी ही जाति के भीतर विवाह) की भूमिका पर जोर दिया।

शक्ति गतिशीलता:

उन्होंने माना कि जाति व्यवस्था एक शक्ति संरचना है, जिसमें कुछ जातियां दूसरों पर विशेषाधिकार और प्रभुत्व रखती हैं।

सामाजिक कलंक और भेदभाव:

अम्बेडकर ने निम्न जाति के व्यक्तियों, विशेषकर दलितों, के समक्ष व्याप्त सामाजिक कलंक और भेदभाव पर प्रकाश डाला।

धार्मिक आधार:

उन्होंने तर्क दिया कि जाति व्यवस्था को अक्सर धार्मिक ग्रंथों और प्रथाओं द्वारा मजबूत किया जाता है, जिससे यह विश्वास पैदा होता है कि कुछ जातियां स्वाभाविक रूप से अन्य की तुलना में अधिक "शुद्ध" हैं।

अम्बेडकर की आलोचना और लक्ष्य:

वर्ण व्यवस्था की आलोचना:

अम्बेडकर ने वर्ण व्यवस्था (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) का कड़ा विरोध किया और तर्क दिया कि यह एक कठोर और पदानुक्रमित व्यवस्था बन गई है जो भेदभाव को उचित ठहराती है।

जाति विनाश पर ध्यान केन्द्रित करें:

अम्बेडकर का लक्ष्य सिर्फ जाति व्यवस्था में सुधार करना नहीं था, बल्कि इसे पूरी तरह से समाप्त करना था, क्योंकि उनका मानना था कि यह समाज में इतनी गहराई से समायी हुई है कि इसे बदला नहीं जा सकता।

सामाजिक न्याय के लिए वकालत:

अम्बेडकर का सपना समानता और न्याय पर आधारित समाज का था, जहां सभी को उनकी जाति की परवाह किए बिना समान अवसर प्राप्त हों।

संवैधानिक प्रावधान:

भारतीय संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में, अम्बेडकर ने यह सुनिश्चित किया कि इसमें जाति-आधारित भेदभाव के विरुद्ध कड़े प्रावधान शामिल किये जाएं, जिनमें अस्पृश्यता का उन्मूलन और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए सामाजिक और आर्थिक समानता को बढ़ावा देना शामिल था।

जाति की आलोचना

डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने जाति व्यवस्था का कड़ा विरोध किया, इसे एक कठोर और पदानुक्रमित सामाजिक संरचना के रूप में देखते हुए, जो असमानता और शोषण को बनाए रखती है, विशेष रूप से दलितों (जिन्हें पहले "अछूत" के रूप में जाना जाता था)। उनका मानना था कि जाति हिंदू धर्म की एक अनिवार्य विशेषता है जिसे सामाजिक न्याय और समानता प्राप्त करने के लिए समाप्त किया जाना चाहिए।

जाति के विरुद्ध अम्बेडकर के **प्रमुख तर्क:**

श्रेणीबद्ध असमानता:

अम्बेडकर जाति को श्रेणीबद्ध असमानता की एक प्रणाली के रूप में देखते थे, जहां व्यक्तियों को उनकी योग्यता या मूल्य के बजाय उनके जन्म के आधार पर सामाजिक स्थिति दी जाती थी। उन्होंने तर्क दिया कि यह व्यवस्था निम्न जातियों में जन्म लेने वालों को अवसर और सम्मान से वंचित करती है।

धार्मिक वैधता:

अम्बेडकर ने जाति व्यवस्था का समर्थन और वैधता प्रदान करने वाले धार्मिक ग्रंथों (शास्त्रों) की आलोचना की तथा तर्क दिया कि इन्हें त्याग दिया जाना चाहिए। उनका मानना था कि "वर्णाश्रम धर्म" (जाति पर आधारित कर्तव्य) की अवधारणा मौजूदा सामाजिक पदानुक्रम को बनाए रखने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला एक उपकरण था।

जाति का विनाश:

अम्बेडकर जाति व्यवस्था के सम्पूर्ण उन्मूलन की वकालत करते थे, उनका मानना था कि यह समाज में इतनी गहराई तक समायी हुई है कि इसमें सुधार करना कठिन है। उन्होंने इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अंतर्जातीय विवाह और अंतर्जातीय भोज का सुझाव दिया।

दलित सशक्तिकरण:

अम्बेडकर अनुसूचित जातियों (एससी) और अनुसूचित जनजातियों (एसटी) की दुर्दशा से बहुत चिंतित थे तथा उनके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सशक्तिकरण की वकालत करते थे। उन्होंने दलितों के अधिकारों के लिए सक्रिय रूप से लड़ाई लड़ी, जिसमें मंदिरों में प्रवेश करने और सार्वजनिक संसाधनों तक पहुंच का अधिकार भी शामिल था, और उन्होंने दलितों के लिए अलग निर्वाचिका का समर्थन किया, जैसा कि मूकनायक इंग्लिश में उजागर किया गया है ।

बौद्ध धर्म में धर्मांतरण:

हिंदू धर्म से मोहभंग के कारण अंबेडकर ने बौद्ध धर्म अपना लिया, जिसे वे एक ऐसा धर्म मानते थे जो पदानुक्रम-विरोधी था और जाति व्यवस्था का समर्थन नहीं करता था।

अंतर्जातीय विवाह और उसका प्रभाव:

अम्बेडकर ने तर्क दिया कि जाति व्यवस्था अंतर्विवाह (अपनी जाति के भीतर विवाह) से जटिल रूप से जुड़ी हुई थी, जो उनके अनुसार जातिगत सीमाओं को बनाए रखने और सामाजिक गतिशीलता को रोकने में एक प्रमुख कारक था।

वर्ण व्यवस्था को चुनौती:

अम्बेडकर ने वर्ण व्यवस्था (समाज का चौगुना विभाजन) और जाति व्यवस्था के बीच अंतर करते हुए तर्क दिया कि वे समान नहीं हैं और वर्ण व्यवस्था कम कठोर और पदानुक्रमित है, जैसा कि स्वराज्यमैग में उजागर किया गया है ।

जाति का विनाश(Annihilation of Caste)

जाति का विनाश या उन्मूलन” 1936 में डॉ. बी.आर. अंबेडकर द्वारा लिखा गया एक भाषण है, जो उन्होंने कभी नहीं दिया।

डॉ. अंबेडकर को मूल रूप से लाहौर में एक हिंदू सुधारवादी समूह, जात-पात तोड़क मंडल में यह भाषण देने के लिए आमंत्रित किया गया था। हालांकि, समूह ने जाति उन्मूलन और हिंदू धर्म के सुधार पर उनके विचारों को बहुत कट्टरपंथी और आपत्तिजनक पाया, जिसके कारण कार्यक्रम रद्द कर दिया गया। इस वजह से अंबेडकर जी यह भाषण कभी नहीं दे पाए। हालांकि बाद में यह भाषण प्रकाशित किया गया।

“जाति उन्मूलन” में प्रस्तुत मुख्य तर्क क्या हैं?

• अंबेडकर का तर्क है कि जाति व्यवस्था न केवल एक सामाजिक विभाजन है बल्कि एक पदानुक्रम है जो असमानता और अन्याय लाता है। वह जाति भेदभाव को उचित ठहराने वाले धार्मिक और नैतिक आधारों की आलोचना करते हैं और जोर देते हैं कि पारंपरिक हिंदू धार्मिक सिद्धांतों में बदलाव किए बिना सामाजिक सुधार संभव नहीं है।

बी. आर अंबेडकर के "जाति के विनाश" के सिद्धांत का तर्क है कि भारत में जाति व्यवस्था एक हानिकारक, गैर-वैज्ञानिक और धार्मिक रूप से निहित सामाजिक संरचना है जिसे न्यायपूर्ण और एकीकृत समाज प्राप्त करने के लिए पूरी तरह से मिटा दिया जाना चाहिए। उनका मानना था कि अंतरजातीय विवाह और अंतरजातीय भोजन अपर्याप्त थे और जाति व्यवस्था को आधार देने वाली धार्मिक धारणाओं को नष्ट कर दिया जाना चाहिए, साथ ही इसे उचित ठहराने वाले शास्त्रों को भी नष्ट कर दिया जाना चाहिए।

अम्बेडकर के सिद्धांत में प्रमुख तर्क:

जाति कोई वैज्ञानिक या प्राकृतिक विभाजन नहीं है:

अम्बेडकर ने तर्क दिया कि जाति किसी जैविक या आनुवंशिक अंतर पर आधारित नहीं है, बल्कि यह एक सामाजिक रचना है।

जाति उत्पीड़न और अन्याय का स्रोत है:

उन्होंने तर्क दिया कि जाति व्यवस्था निम्न जातियों के विरुद्ध सामाजिक असमानता और भेदभाव को कायम रखती है, जिससे अस्पृश्यता जैसी सामाजिक बुराइयां पैदा होती हैं और उन्हें समान अवसरों से वंचित किया जाता है।

जाति राष्ट्रीय एकता में एक बड़ी बाधा है:

अम्बेडकर का मानना था कि जाति व्यवस्था भारतीय समाज को विभाजित करती है तथा एकजुट एवं मजबूत राष्ट्र के निर्माण में बाधा डालती है।

जाति को उचित ठहराने वाले धार्मिक ग्रंथों को नष्ट किया जाना चाहिए:

उन्होंने तर्क दिया कि वेद और अन्य हिंदू धर्मग्रंथ जाति व्यवस्था को वैध ठहराते हैं और इस व्यवस्था को खत्म करने के लिए उनके अधिकार को चुनौती दी जानी चाहिए तथा उसे उखाड़ फेंका जाना चाहिए।

अंतर्जातीय विवाह और अंतर्जातीय भोजन अपर्याप्त हैं:

यद्यपि ये कदम सही दिशा में हैं, लेकिन अम्बेडकर का मानना था कि जाति व्यवस्था को समाप्त करने के लिए ये पर्याप्त नहीं हैं तथा अधिक मौलिक परिवर्तन की आवश्यकता है।

स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व पर आधारित एक नया समाज:

अम्बेडकर ने जातिगत भेदभाव से मुक्त समाज की कल्पना की थी, जहाँ सभी के साथ सम्मान और गरिमा के साथ व्यवहार किया जाता हो।

अम्बेडकर द्वारा **प्रस्तावित समाधान:**

जाति के धार्मिक आधार को नष्ट करना:

उन्होंने तर्क दिया कि जाति व्यवस्था को कायम रखने वाले धार्मिक ग्रंथों और मान्यताओं को त्याग दिया जाना चाहिए।

अंतरजातीय विवाह को बढ़ावा देना:

यद्यपि यह एकमात्र समाधान नहीं था, फिर भी अम्बेडकर ने अंतर्जातीय विवाह को जाति की सामाजिक बाधाओं को समाप्त करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम के रूप में देखा।

स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों पर आधारित सामाजिक संरचना में सुधार:

उन्होंने इन सिद्धांतों पर आधारित एक ऐसे समाज की वकालत की, जहां सभी के साथ समान व्यवहार किया जाए और सभी को समान अवसर मिलें।

संक्षेप में, अंबेडकर का "जाति का विनाश" एक क्रांतिकारी सामाजिक परिवर्तन का आह्वान है जो सतही सुधारों से आगे बढ़कर जाति व्यवस्था को जड़ से खत्म करने का प्रयास करता है, तथा एक अधिक न्यायपूर्ण और एकीकृत भारत का मार्ग प्रशस्त करता है।

Broken Man Theory

अंबेडकर जी का **'टूटे हुए आदमी या पृथक किए गए लोग' का सिद्धांत (Theory of Broken Man)**

1. पृष्ठभूमि:

डॉ. अंबेडकर का मुख्य उद्देश्य भारतीय जाति व्यवस्था को तोड़ना और अछूतों की स्थिति को ऐतिहासिक व समाजशास्त्रीय दृष्टि से समझाना था। उन्होंने हिंदू धर्मग्रंथों में जाति को धार्मिक रूप से सही ठहराने को नकारते हुए तर्क, इतिहास और समाजशास्त्र के आधार पर अछूतों की उत्पत्ति को स्पष्ट किया।

"टूटे हुए आदमी" का सिद्धांत उनके प्रसिद्ध निबंध “The Untouchables: Who Were They and Why They Became Untouchables?” में विस्तार से प्रस्तुत किया गया है।

2. “टूटे हुए आदमी” का अर्थ:

डॉ. अंबेडकर ने अछूतों को "टूटे हुए लोग" (Broken Men) कहा – यह एक रूपक है उन समुदायों के लिए जो:

- अपने सामाजिक और राजनीतिक अधिकारों से वंचित हो गए

- युद्धों में हार गए या अपनी जमीनों से खदेड़ दिए गए

- समाज से अलग-थलग कर दिए गए और सम्मान से जीने का अधिकार खो बैठे

ये लोग कभी स्वतंत्र समुदायों का हिस्सा थे, लेकिन ब्राह्मणवाद और जाति व्यवस्था के विकास के साथ इनका सामाजिक व मानवीय पतन हुआ।

3. ऐतिहासिक प्रक्रिया:

(क) जनजातीय उत्पत्ति और पराजय:

अंबेडकर के अनुसार अछूत समुदाय आर्येतर या आदिवासी मूल के थे। जब आर्यों या ऊँची जातियों ने भारत में प्रभुत्व स्थापित किया, तो इन समुदायों को:

- युद्ध में हराया गया और गुलाम बनाया गया

- गांवों से बाहर निकाल कर अलग बस्तियों में बसाया गया

(ख) समुदायिक जीवन का विघटन:

इन लोगों को जाति व्यवस्था से बाहर कर दिया गया:

- उनके पास कोई जमीन नहीं थी

- कोई सामाजिक पहचान नहीं बची

- उन्हें घृणित और अपवित्र कार्यों के लिए मजबूर किया गया, जैसे कि मृत जानवरों को उठाना, चमड़े का काम, सफाई आदि

4. धर्म और जाति की भूमिका:

अंबेडकर ब्राह्मणवादी हिंदू धर्म की आलोचना करते थे, क्योंकि यह धर्म:

- अछूतों को धार्मिक रूप से अपवित्र घोषित करता था

- जाति और पेशों को स्थायी बनाता था

- जन्म आधारित असमानता को वैधता देता था

जाति व्यवस्था ने सुनिश्चित किया कि टूटे हुए लोग कभी फिर से अपने अधिकार प्राप्त न कर सकें।

5. अस्पृश्यता की उत्पत्ति:

अंबेडकर के अनुसार अस्पृश्यता :

- धार्मिक या नस्लीय कारणों से नहीं, बल्कि आर्थिक और सामाजिक भेदभाव के कारण उत्पन्न हुआ

- ये समुदाय मांसाहारी थे, पशुओं का वध करते थे, जिससे ब्राह्मण उन्हें अपवित्र मानते थे

- इनके धार्मिक रीति-रिवाज अलग थे, इसलिए इन्हें "हिंदू धर्म से बाहर" माना गया

6. राजनीतिक प्रभाव:

इस सिद्धांत के माध्यम से अंबेडकर ने कई सुधारों की मांग की:

- शिक्षा, नौकरियों और राजनीति में आरक्षण

- दलितों के लिए स्वतंत्र राजनीतिक प्रतिनिधित्व

- अंततः बौद्ध धर्म में परिवर्तन, क्योंकि उन्होंने हिंदू धर्म को जातिवाद से मुक्त नहीं माना

उनका मानना था कि जाति का विनाश हुए बिना भारत एक सच्चा लोकतांत्रिक समाज नहीं बन सकता।

7. "टूटे हुए लोग" का प्रतीकात्मक अर्थ:

"टूटे हुए आदमी" शब्द एक गहरे अनुभव को दर्शाता है:

- ऐतिहासिक पीड़ा और वंचना

- समाज से निकाले गए लोगों का जीवन संघर्ष

- साथ ही साथ, यह संघर्ष और जीवटता का प्रतीक भी है — क्योंकि ये लोग तमाम अत्याचारों के बावजूद आज भी जीवित हैं और लड़ रहे हैं

8. वर्तमान प्रासंगिकता:

आज भी कई हिस्सों में दलितों को भेदभाव का सामना करना पड़ता है। यह सिद्धांत हमें:

- जाति को एक ऐतिहासिक अन्याय के रूप में देखने को प्रेरित करता है

- समाज और राज्य को न्याय और समानता की दिशा में काम करने की चेतावनी देता है

- दलित आंदोलनों और अकादमिक चिंतन के लिए आज भी प्रेरणास्रोत बना हुआ है

निष्कर्ष:

डॉ. अंबेडकर का "टूटे हुए आदमी" सिद्धांत एक इतिहास-आधारित, मानवतावादी और क्रांतिकारी विचार है। यह अछूतों को केवल पीड़ित नहीं, बल्कि एक ऐतिहासिक अन्याय के शिकार के रूप में दिखाता है, जो सम्मान और अधिकार के पात्र हैं।

यह जातिव्यवस्था की धार्मिक मान्यताओं को खारिज करता है और समाज में समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व की स्थापना की मांग करता है।

Ambedkar 's Theory of Social Reconstruction (सामाजिक पुनर्संरचना का सिद्धांत)

बी. आर अंबेडकर का सामाजिक पुनर्निर्माण का सिद्धांत स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व पर आधारित समाज बनाने पर केंद्रित था, जिसमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय पर जोर दिया गया था। उन्होंने जाति व्यवस्था को खत्म करने और योग्यता आधारित समाज की स्थापना की वकालत की, जहां सभी को समान अवसर मिले। अंबेडकर का मानना था कि सामाजिक असमानताएं, विशेष रूप से जाति व्यवस्था में निहित असमानताएं, सामाजिक प्रगति में बड़ी बाधाएँ हैं।

यहां उनके सिद्धांत का अधिक विस्तृत विवरण दिया गया है:

प्रमुख सिद्धांत:

सामाजिक न्याय:

अम्बेडकर ने सामाजिक न्याय को सभी के लिए समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के सिद्धांत के रूप में परिभाषित किया, जिसका उद्देश्य जाति, नस्ल, लिंग, शक्ति, पद और धन के आधार पर सभी प्रकार की असमानता को मिटाना था।

समानता:

उनका मानना था कि एक ऐसा समाज होना चाहिए जहां सभी को, चाहे उनकी पृष्ठभूमि कुछ भी हो, समान अवसर और अधिकार प्राप्त हों।

स्वतंत्रता:

अम्बेडकर ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता और स्वायत्तता के महत्व पर जोर दिया और तर्क दिया कि सच्ची स्वतंत्रता के लिए सामाजिक परिस्थितियों की आवश्यकता होती है जो इसके प्रयोग की अनुमति देती हैं।

बंधुत्व:

उन्होंने समाज के सभी सदस्यों के बीच भाईचारे और एकता की भावना के महत्व पर बल दिया।

योग्यता आधारित समाज:

अम्बेडकर ने एक ऐसी व्यवस्था की वकालत की जिसमें व्यक्ति की सामाजिक स्थिति उसके जन्म या जाति के आधार पर नहीं बल्कि उसकी योग्यता और उपलब्धियों के आधार पर निर्धारित हो।

सामाजिक संरचना का पुनर्निर्माण:

जाति उन्मूलन:

अम्बेडकर ने जाति व्यवस्था की कड़ी आलोचना की तथा इसे सामाजिक प्रगति और समानता में एक बड़ी बाधा बताया। उन्होंने तर्क दिया कि इससे सामाजिक पदानुक्रम कायम रहता है और निचली जातियों को समान अवसरों से वंचित किया जाता है।

दलितों का सशक्तिकरण:

उन्होंने दलितों (जिन्हें पहले अछूत कहा जाता था) और अन्य हाशिए पर पड़े समूहों के अधिकारों के लिए लड़ाई लड़ी तथा उनकी शिक्षा, आर्थिक सशक्तिकरण और राजनीतिक प्रतिनिधित्व की वकालत की।

सामाजिक लोकतंत्र:

अम्बेडकर का मानना था कि सच्चा लोकतंत्र सिर्फ राजनीतिक अधिकारों पर नहीं बल्कि सामाजिक समानता और न्याय पर आधारित होना चाहिए।

सकारात्मक कार्रवाई:

उन्होंने ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने तथा हाशिए पर पड़े समूहों को समान अवसर सुनिश्चित करने के लिए सकारात्मक कार्रवाई उपायों का समर्थन किया।

शिक्षा की भूमिका:

अम्बेडकर ने व्यक्तियों को सशक्त बनाने और सामाजिक परिवर्तन को बढ़ावा देने में शिक्षा के महत्व पर बल दिया।

अम्बेडकर के **आदर्श समाज के दृष्टिकोण** में शामिल थे:

एक ऐसा समाज जहाँ व्यक्ति अभाव और भय से मुक्त हो।

एक ऐसा समाज जो प्रत्येक व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता और खुशी की खोज के अधिकार को कायम रखता है।

एक ऐसा समाज जो सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक असमानताओं को दूर करता है।

एक ऐसा समाज जो प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास को प्रोत्साहित और सुविधाजनक बनाता है।

Unit-IV

अम्बेडकर द्वारा धर्म की परिभाषा और दर्शन (Definition & Philosophy of Religion by Ambedkar)

बी. आर अंबेडकर के लिए, धर्म मुख्य रूप से आध्यात्मिक मोक्ष या दैवीय शासन के बारे में नहीं है, बल्कि व्यक्तियों के बीच न्यायपूर्ण और समतापूर्ण संबंध स्थापित करने के लिए एक "सामाजिक सिद्धांत" है। उन्होंने इसे समाज में नैतिक व्यवस्था बनाने और समानता, बंधुत्व और न्याय की ओर एक मार्ग के रूप में देखा। अंबेडकर ने इस बात पर जोर दिया कि सच्चा धर्म विज्ञान के अनुरूप होना चाहिए, समाज पर शासन करने के लिए नैतिकता प्रदान करनी चाहिए और सार्वभौमिक मूल्यों को बढ़ावा देना चाहिए।

अम्बेडकर का धर्म दर्शन:

सामाजिक सिद्धांत:

अम्बेडकर धर्म को केवल आध्यात्मिक खोज के बजाय लोगों के बीच नैतिक और न्यायपूर्ण संबंध स्थापित करने के एक ढांचे के रूप में देखते थे।

नैतिकता और धम्म:

उनका मानना था कि नैतिकता और धर्म एक दूसरे से जुड़े हुए हैं, सच्चा धर्म (धम्म) नैतिकता का पर्याय है।

सार्वभौमिकता और न्याय:

अम्बेडकर के धर्म दर्शन ने सार्वभौमिक सिद्धांतों और न्याय के महत्व पर जोर दिया तथा सभी व्यक्तियों के समावेश और अधिकारों की वकालत की, चाहे उनकी सामाजिक स्थिति कुछ भी हो।

हिंदू धर्म की आलोचना:

अम्बेडकर हिंदू धर्म में जाति व्यवस्था और पदानुक्रमिक संरचनाओं के आलोचक थे, जिन्हें वे समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों को कमजोर करने वाला मानते थे।

सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में धर्म:

अम्बेडकर का मानना था कि धर्म सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन, समानता, न्याय और सामाजिक सद्भाव को बढ़ावा देने वाली शक्ति हो सकती है।

अंधविश्वास और कर्मकांड की अस्वीकृति:

अम्बेडकर ने ऐसे धर्म की आलोचना की जो कर्मकाण्ड, अंधविश्वास और अंध विश्वास पर आधारित था, तथा उन्होंने तर्क और तर्कसंगत जांच के महत्व पर बल दिया।

शिक्षा का महत्व:

अम्बेडकर ने सामाजिक न्याय के बारे में आलोचनात्मक सोच और समझ को बढ़ावा देने में शिक्षा की भूमिका पर बल दिया, जिसे वे न्यायपूर्ण समाज के निर्माण के लिए आवश्यक मानते थे।

बुद्ध का धर्म एक आदर्श के रूप में:

अम्बेडकर ने नैतिकता, समानता और अहिंसा पर जोर देने के लिए बौद्ध धर्म की प्रशंसा की तथा इसे एक ऐसे धर्म के रूप में देखा जो न्यायपूर्ण और समतामूलक समाज के लिए एक आदर्श बन सकता है।

आधुनिक धर्म:

अम्बेडकर ने प्रस्ताव दिया कि एक उपयुक्त समकालीन धर्म को समाज को संचालित करने के लिए नैतिकता प्रदान करनी चाहिए, विज्ञान के अनुरूप होना चाहिए तथा सार्वभौमिक भाईचारे को बढ़ावा देना चाहिए।

अंबेडकर के दृष्टिकोण से धर्म और समाज

बीआर अंबेडकर ने धर्म को एक सामाजिक शक्ति और सामाजिक परिवर्तन के लिए एक संभावित उपकरण के रूप में देखा, नैतिक व्यवस्था और सामाजिक संबंधों को आकार देने में इसकी भूमिका पर जोर दिया। सामाजिक मानदंडों पर धर्म के प्रभाव को स्वीकार करते हुए, उन्होंने असमानता और उत्पीड़न को बनाए रखने की इसकी क्षमता की आलोचना की, विशेष रूप से हिंदू धर्म और जाति व्यवस्था के संदर्भ में। उन्होंने धर्म को एक सामाजिक सिद्धांत के रूप में देखा, जिसका मूल्यांकन समाज पर इसके प्रभाव के आधार पर किया जाना चाहिए, न कि

केवल इसके व्यक्तिगत आध्यात्मिक लाभों के आधार पर। अंबेडकर ने अंततः हिंदू धर्म की सामाजिक बुराइयों को अस्वीकार करने और समानता और न्याय को बढ़ावा देने वाले धर्म को अपनाने के लिए बौद्ध धर्म को चुना।

यहां अंबेडकर के दृष्टिकोण पर अधिक विस्तृत नजर डाली गई है:

सामाजिक सिद्धांत के रूप में धर्म:

अम्बेडकर ने धर्म को विशुद्ध आध्यात्मिक खोज के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसी शक्ति के रूप में देखा जो सामाजिक संरचनाओं और रिश्तों को आकार देती है। उनका मानना था कि किसी धर्म का मूल्यांकन न्यायपूर्ण और समतापूर्ण समाज को बढ़ावा देने की उसकी क्षमता के आधार पर किया जाना चाहिए।

हिंदू धर्म और जाति की आलोचना:

अम्बेडकर ने हिंदू धर्म की गहराई से जड़ें जमाए हुए जाति व्यवस्था की कड़ी आलोचना की, जिसे वे सामाजिक असमानता और भेदभाव का स्रोत मानते थे, विशेष रूप से दलितों (जिन्हें पहले "अछूत" के नाम से जाना जाता था) के विरुद्ध। उन्होंने इस प्रणाली को धार्मिक रूप से स्वीकृत तथा वास्तविक न्यायपूर्ण एवं नैतिक समाज के साथ असंगत माना।

जाति का विनाश:

अम्बेडकर ने अपना जीवन जाति व्यवस्था को चुनौती देने तथा इसके पूर्ण उन्मूलन की वकालत करने के लिए समर्पित कर दिया। उनका मानना था कि सच्ची सामाजिक समानता और न्याय प्राप्त करने के लिए जाति का उन्मूलन आवश्यक है।

बौद्ध धर्म में धर्मांतरण:

हिंदू धर्म के दमनकारी पहलुओं को अस्वीकार करने और समानता और न्याय के अपने आदर्शों के अनुरूप धर्म को अपनाने के लिए, अंबेडकर ने 1956 में बौद्ध धर्म अपना लिया। उन्होंने बौद्ध धर्म को एक अधिक प्रगतिशील और समावेशी धर्म के रूप में देखा जो दलितों को उनकी गरिमा और स्वतंत्रता को पुनः प्राप्त करने में मदद कर सकता था।

सामाजिक न्याय पर जोर:

धर्म के बारे में अम्बेडकर की समझ सामाजिक न्याय और समानता के प्रति उनकी प्रतिबद्धता से अभिन्न रूप से जुड़ी हुई थी। उनका मानना था कि एक न्यायपूर्ण समाज का निर्माण स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों पर किया जाना चाहिए तथा धर्म को इन मूल्यों को बढ़ावा देने में भूमिका निभानी चाहिए।

अंबेडकर द्वारा धर्म-परिवर्तन की घोषणा (Declaration of Religion Conversion)

एक महत्वपूर्ण निर्णय में, डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने 14 अक्टूबर, 1956 को नागपुर में दीक्षाभूमि पर अपने सैकड़ों हज़ारों समर्थकों के साथ सार्वजनिक रूप से बौद्ध धर्म अपना लिया। धर्म परिवर्तन का यह कार्य सिर्फ़ एक व्यक्तिगत पसंद नहीं था, बल्कि हिंदू धर्म का प्रतीकात्मक अस्वीकृति और बौद्ध धर्म के सिद्धांतों, विशेष रूप से समानता और सामाजिक न्याय पर इसके जोर के प्रति उनकी प्रतिबद्धता का एक बयान था।

अम्बेडकर की घोषणा और "महान धर्मान्तरण":

येओला घोषणा (1935):

अंबेडकर ने पहली बार 1935 में महाराष्ट्र के येओला में हिंदू धर्म त्यागने की घोषणा की थी। वे हिंदू धर्म की जाति व्यवस्था और दलितों के प्रति उसके व्यवहार के आलोचक थे, और उन्होंने समानता और सामाजिक मुक्ति के संभावित मार्ग के रूप में बौद्ध धर्म की खोज शुरू की।

दादर सम्मेलन (1936):

अम्बेडकर ने हिंदू धर्म छोड़ने के अपने निर्णय पर जनता की प्रतिक्रिया का आकलन करने के लिए 1936 में मुंबई में एक सम्मेलन आयोजित किया।

सार्वजनिक धर्मांतरण (1956):

14 अक्टूबर 1956 को नागपुर में दीक्षाभूमि पर अम्बेडकर ने अपने लगभग 500,000 अनुयायियों के साथ सार्वजनिक रूप से बौद्ध धर्म अपना लिया। यह घटना "महान धर्मांतरण" के नाम से जानी गयी।

22 प्रतिज्ञाएँ:

अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म अपनाने वालों के लिए 22 प्रतिज्ञाएं बताईं, जिनमें समानता, करुणा और अहिंसा जैसे सिद्धांतों पर जोर दिया गया।

अंबेडकर के धर्मांतरण का महत्व:

हिंदू धर्म की अस्वीकृति:

अम्बेडकर का धर्म परिवर्तन जाति व्यवस्था और हिंदू समाज में व्याप्त अन्याय की प्रतीकात्मक अस्वीकृति थी।

समानता और न्याय तथा अलग पहचान की खोज:

उन्होंने बौद्ध धर्म को दलितों के लिए समानता और सामाजिक न्याय प्राप्त करने के साधन के रूप में देखा, जो लंबे समय से हिंदू समाज में हाशिए पर थे।

दलित बौद्ध आंदोलन:

अम्बेडकर के धर्म परिवर्तन ने दलितों के बीच एक महत्वपूर्ण आंदोलन को जन्म दिया, जिन्होंने बौद्ध धर्म को अपनी पहचान स्थापित करने और जाति-आधारित उत्पीड़न से मुक्ति पाने के एक रास्ते के रूप में देखा।

क्रांतिकारी कदम:

इस धर्मांतरण को एक क्रांतिकारी कार्य के रूप में देखा गया जिसने भारत की पारंपरिक सामाजिक और धार्मिक व्यवस्था को चुनौती दी।

बौद्ध धर्म में दीक्षित होना(Embracement in Buddhism)

डॉ. बीआर अंबेडकर ने 14 अक्टूबर, 1956 को नागपुर में दीक्षाभूमि पर बौद्ध धर्म अपनाया, यह एक ऐतिहासिक घटना थी जिसमें 360,000 महार शामिल हुए थे। यह धर्मांतरण भारत में दलितों के लिए एक महत्वपूर्ण क्षण था, जो हिंदू जाति व्यवस्था को अस्वीकार करने और समानता और आत्म-सम्मान की ओर बढ़ने का प्रतीक था। अंबेडकर का यह निर्णय सामाजिक असमानताओं के खिलाफ उनके लंबे समय से चले आ रहे संघर्ष और उनके इस विश्वास से प्रेरित था कि बौद्ध धर्म दलितों के लिए अधिक तर्कसंगत और न्यायपूर्ण मार्ग प्रदान करता है।

यहां उनके द्वारा बौद्ध धर्म अपनाने पर अधिक विस्तृत जानकारी दी गई है:

प्रेरणा:

अम्बेडकर का निर्णय हिंदू जाति व्यवस्था की उनकी गहरी आलोचना और समानता में उनके विश्वास पर आधारित था। उन्होंने महसूस किया कि हिंदू धर्म की पदानुक्रमिक संरचना की तुलना में बौद्ध धर्म सामाजिक संगठन के लिए अधिक तर्कसंगत और न्यायपूर्ण ढांचा प्रदान करता है।

प्रतीकात्मक महत्व:

यह धर्म परिवर्तन महज एक व्यक्तिगत निर्णय नहीं था, बल्कि सामाजिक अन्याय के खिलाफ एक बयान और दलित सशक्तिकरण का आह्वान था। यह दलितों के लिए एक महत्वपूर्ण मोड़ था, क्योंकि इससे उन्हें पहचान और स्वतंत्रता का एक नया अहसास मिला।

मुक्ति का मार्ग के रूप में बौद्ध धर्म:

अम्बेडकर बौद्ध धर्म को एक ऐसे धर्म के रूप में देखते थे जो समानता, करुणा और समझ पर जोर देता था। उनका मानना था कि इन सिद्धांतों से अधिक न्यायपूर्ण और समतापूर्ण समाज का निर्माण हो सकता है।

नवयान बौद्ध धर्म:

अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म के अपने संस्करण को "नवयान" या "नव-बौद्ध धर्म" कहा, तथा दलितों के लिए इसकी अद्वितीय व्याख्या और अनुप्रयोग पर जोर दिया।

दलित बौद्ध धर्म पर प्रभाव:

अम्बेडकर के धर्म परिवर्तन से दलितों में बौद्ध धर्म अपनाने का एक बड़े पैमाने पर आंदोलन शुरू हुआ, जो भारत में एक महत्वपूर्ण धार्मिक और सामाजिक घटना बनी हुई है।

अम्बेडकर द्वारा बौद्ध धर्म अपनाने के कारण (Reasons for Embracement of Buddhism by Ambedkar)

यहाँ डॉ. भीमराव अंबेडकर द्वारा बौद्ध धर्म अपनाने के कारणों का विस्तृत और दीर्घ विवरण हिंदी में प्रस्तुत किया गया है। उनका यह निर्णय एक गहरा आध्यात्मिक, सामाजिक और राजनीतिक कदम था, जो वर्षों के चिंतन, अध्ययन और संघर्ष के बाद लिया गया। उनका 1956 में बौद्ध धर्म में धर्मांतरण केवल व्यक्तिगत नहीं था, बल्कि यह एक सामूहिक मुक्ति आंदोलन भी था।

1. हिंदू जाति व्यवस्था से असहमति

डॉ. अंबेडकर द्वारा बौद्ध धर्म अपनाने का सबसे महत्वपूर्ण कारण हिंदू धर्म में निहित जाति व्यवस्था का विरोध था। वे स्वयं एक दलित परिवार में जन्मे थे और जीवनभर अस्पृश्यता और सामाजिक भेदभाव का सामना किया।

- शास्त्रीय आधार: मनुस्मृति जैसे हिंदू धर्मग्रंथों ने जातिवाद को धार्मिक मान्यता दी थी। अंबेडकर ने इसे सार्वजनिक रूप से जलाया।

- सुधार की असफल कोशिशें: उन्होंने शुरुआत में हिंदू धर्म के भीतर सुधार लाने की कोशिश की, लेकिन बाद में यह निष्कर्ष निकाला कि हिंदू धर्म के भीतर समानता संभव नहीं है।

2. सामाजिक न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के प्रति प्रतिबद्धता

अंबेडकर के जीवन और विचारों का मूल आधार था – स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व। ये वही मूल्य थे जिन पर भारतीय संविधान की नींव रखी गई। उन्हें यह सब बौद्ध धर्म में ही पूर्ण रूप से मिला।

- स्वतंत्रता: बुद्ध ने व्यक्ति की सोच और आत्मज्ञान पर जोर दिया।

- समानता: बुद्ध ने जाति और लिंग के भेद को नकारते हुए सभी को संघ में स्थान दिया।

- बंधुत्व: बौद्ध धर्म करुणा (Karuna) और मैत्री (Metta) पर आधारित है, जो सामाजिक एकता को बढ़ावा देता है।

इस प्रकार, बौद्ध धर्म ने उन्हें एक न्यायसंगत और समानतावादी समाज की रूपरेखा दी।

3. बौद्ध धर्म की तर्कशील और वैज्ञानिक प्रवृत्ति

डॉ. अंबेडकर स्वयं एक शिक्षित और तर्कशील व्यक्ति थे। वे किसी भी अंधविश्वास और रूढ़ियों के विरोधी थे।

- बुद्ध ने तर्क, अनुभव और नैतिकता पर आधारित जीवन शैली का समर्थन किया।

- बौद्ध धर्म में ईश्वर की पूजा, यज्ञ, हवन या जातिगत कर्मकांडों की कोई जगह नहीं थी।

- यह धर्म दुख के कारण और निवारण की व्याख्या करता है।

इसलिए, बौद्ध धर्म उनके वैज्ञानिक और तर्कशील दृष्टिकोण के अनुरूप था।

4. दलितों का सशक्तिकरण और आत्म-सम्मान की पुनर्प्राप्ति

अंबेडकर मानते थे कि राजनीतिक और आर्थिक सुधार तब तक अधूरे हैं जब तक मानसिक और धार्मिक दासता खत्म न हो। उन्होंने देखा कि धर्म के माध्यम से दलितों को सम्मान और गरिमा दी जा सकती है।

- बौद्ध धर्म उन्हें एक नवीन धार्मिक पहचान प्रदान करता था, जिसमें कोई हीनता नहीं थी।

- यह एक सकारात्मक और रचनात्मक विकल्प था, जिसमें दलित न केवल पिछड़ा होने का कलंक मिटा सकते थे, बल्कि एक नई शुरुआत भी कर सकते थे।

5. भारत में बौद्ध धर्म की ऐतिहासिक विरासत

अंबेडकर बौद्ध धर्म को भारत की मूल धार्मिक परंपरा मानते थे। उन्होंने देखा कि यह धर्म एक समय भारत में व्यापक रूप से फैला हुआ था और समानता एवं करुणा का संदेश देता था।

- उन्होंने इसे भारत की भूली हुई सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विरासत के रूप में पुनर्जीवित करने का कार्य किया।

- बुद्ध को उन्होंने भारत का सबसे महान समाज सुधारक माना।

6. सामाजिक परिवर्तन का सामूहिक आंदोलन

डॉ. अंबेडकर का धर्मांतरण केवल व्यक्तिगत नहीं था – यह एक सामाजिक क्रांति थी। उन्होंने लाखों अनुयायियों के साथ धर्म बदला।

- 14 अक्टूबर 1956 को नागपुर में, उन्होंने बौद्ध धर्म ग्रहण किया और उनके साथ 5 लाख से अधिक लोगों ने भी धर्मांतरण किया।

- उन्होंने अनुयायियों को 22 प्रतिज्ञाएँ दिलाईं, जिसमें उन्होंने हिंदू देवी-देवताओं और कर्मकांडों का त्याग किया।

यह एक शांति और आत्म-सम्मान पर आधारित आंदोलन था, जिसने दलितों को एक नई पहचान और दिशा दी।

7. अंतिम दार्शनिक विश्वास

अपने जीवन के अंतिम वर्षों में अंबेडकर ने "द बुद्ध एंड हिज धम्म" नामक पुस्तक लिखी, जिसमें उन्होंने बुद्ध के धर्म को नैतिकता और सामाजिक न्याय का आधार बताया।

- वे बौद्ध धर्म को केवल एक धर्म नहीं, बल्कि एक नैतिक जीवन-पद्धति मानते थे।

- उन्होंने इसे आधुनिक, लोकतांत्रिक और धर्मनिरपेक्ष भारत के निर्माण का आधार बताया।

निष्कर्ष

डॉ. भीमराव अंबेडकर का बौद्ध धर्म ग्रहण करना सामाजिक, आध्यात्मिक और राजनीतिक मुक्ति का महान कार्य था। यह एक नई सामाजिक क्रांति की शुरुआत थी, जिसने लाखों लोगों को सम्मान, समानता और आत्म-निर्भरता का रास्ता दिखाया। उनके लिए बौद्ध धर्म सिर्फ एक धर्म नहीं था, बल्कि एक आंदोलन, एक दर्शन, और एक नई चेतना थी।

अंबेडकर जी का भारतीय संविधान के निर्माण में योगदान (Contribution in Constitution Making)

भारतीय संविधान के प्रारूपण में डॉ. बी.आर. अंबेडकर की भूमिका और योगदान व्यापक और महत्वपूर्ण था। यहां उनके योगदान और भारत के संविधान में लागू किए गए महत्वपूर्ण अधिकारों और अधिनियमों पर प्रकाश डालने वाले कुछ मुख्य बिंदु दिए गए हैं:

भारतीय संविधान की प्रस्तावना का प्रारूपण: डॉ. अंबेडकर ने प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया, जिन्होंने प्रस्तावना का प्रारूपण करने के कार्य का नेतृत्व किया, जो भारत के संविधान के मूल को रेखांकित करता है।

मौलिक अधिकारों के पैरोकार: डॉ. अंबेडकर ने संविधान में मौलिक अधिकारों को शामिल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ये अधिकार, जैसे समानता का अधिकार, भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और भेदभाव से सुरक्षा का अधिकार, व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं।

सार्वभौमिक मताधिकार की स्थापना: डॉ. अंबेडकर ने सार्वभौमिक मताधिकार की वकालत की, जिसका अर्थ है कि प्रत्येक वयस्क नागरिक को जाति, लिंग, धर्म या आर्थिक स्थिति के आधार पर बिना किसी भेदभाव के वोट देने का अधिकार है। सार्वभौमिक मताधिकार का यह सिद्धांत सभी नागरिकों के लिए लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व और भागीदारी सुनिश्चित करता है।

धर्मनिरपेक्ष राज्य की वकालत: डॉ. अंबेडकर ने धर्मनिरपेक्ष राज्य की पुरजोर वकालत की। परिणामस्वरूप, भारतीय संविधान ने भारत को एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र घोषित किया, जिसमें सभी नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रता की गारंटी दी गई और राज्य को किसी विशेष धर्म का पक्ष लेने से प्रतिबंधित किया गया।

अस्पृश्यता का उन्मूलन: डॉ. अंबेडकर अस्पृश्यता की प्रथा को मिटाने और दलित समुदाय के लिए समानता सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबद्ध थे। संविधान ने स्पष्ट रूप से अस्पृश्यता को समाप्त कर दिया और जाति-आधारित भेदभाव के खिलाफ सुरक्षा प्रदान की।

आरक्षण नीतियाँ: डॉ. अंबेडकर ने सकारात्मक कार्रवाई के कारण की वकालत की और हाशिए पर पड़े समुदायों के उत्थान के लिए आरक्षण नीतियों की वकालत की। संविधान में सामाजिक रूप से वंचित समूहों को समान अवसर प्रदान करने के लिए शिक्षा, रोजगार और विधायी निकायों में आरक्षण के प्रावधान शामिल हैं।

महिलाओं के लिए समान अधिकार: डॉ. अंबेडकर ने लैंगिक समानता के महत्व पर जोर दिया और महिलाओं की रक्षा और उन्हें सशक्त बनाने वाले प्रावधानों को शामिल करने की दिशा में काम किया। संविधान महिलाओं के लिए समान अधिकारों की गारंटी देता है और लिंग के आधार पर भेदभाव को रोकता है।

सामाजिक न्याय और कल्याण उपाय: डॉ. अंबेडकर का सामाजिक न्याय का दृष्टिकोण संविधान में निहित विभिन्न कल्याणकारी उपायों में परिलक्षित होता है। इन उपायों का उद्देश्य शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और सामाजिक सुरक्षा से संबंधित नीतियों के माध्यम से समाज के हाशिए पर पड़े वर्गों का उत्थान करना है। स्वतंत्र न्यायपालिका: डॉ. अंबेडकर ने भारत में स्वतंत्र न्यायपालिका की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने एक ऐसी न्यायिक प्रणाली की वकालत की जो कानून के शासन को कायम रखे, नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करे और सरकार की अन्य शाखाओं पर नियंत्रण के रूप में कार्य करे। अल्पसंख्यक अधिकारों की सुरक्षा: डॉ. अंबेडकर धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए प्रतिबद्ध थे। संविधान में उनके सांस्कृतिक, शैक्षिक और धार्मिक अधिकारों की रक्षा के प्रावधान शामिल हैं

अंबेडकर के आर्थिक विचार (Economic Ideas of Ambedkar)

डॉ बी आर अंबेडकर के सामाजिक और राजनीतिक विचारों की तरह उनके आर्थिक विचारों का भी काफी महत्व है। उनके आर्थिक विचारों को जानकर प्रसिद्ध अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन ने उनकी प्रशंसा में ये शब्द कहें हैं।

"अम्बेडकर अर्थशास्त्र में मेरे पिता हैं; अर्थशास्त्र के क्षेत्र में उनका योगदान अद्भुत है और उसे हमेशा याद रखा जाएगा" - डॉ. अमर्त्य सेन

डॉ. भीमराव अंबेडकर के आर्थिक विचार

परिचय

डॉ. भीमराव रामजी अंबेडकर (1891–1956) एक बहुआयामी व्यक्तित्व थे—एक न्यायविद, समाज सुधारक, राजनीतिक चिंतक और अर्थशास्त्री। वे भारतीय संविधान के शिल्पकार के रूप में प्रसिद्ध हैं, परंतु उनके आर्थिक विचार और योगदान भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। अंबेडकर पहले भारतीयों में से थे जिन्होंने कोलंबिया यूनिवर्सिटी और लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स जैसी संस्थाओं से औपचारिक आर्थिक शिक्षा प्राप्त की थी। उनके आर्थिक विचार सामाजिक न्याय, समानता, और राज्य की ज़िम्मेदारी पर आधारित थे।

1. आर्थिक लोकतंत्र और सामाजिक न्याय

अंबेडकर का मानना था कि राजनीतिक लोकतंत्र तब तक अधूरा है जब तक वह आर्थिक और सामाजिक लोकतंत्र से न जुड़ा हो।

केवल मतदान का अधिकार तभी सार्थक है जब प्रत्येक व्यक्ति को आर्थिक संसाधनों तक समान पहुंच और अवसर प्राप्त हो।

प्रमुख बिंदु:

- **आर्थिक लोकतंत्र का अर्थ है:**

- आर्थिक असमानता का अंत

- जाति आधारित पेशागत बंधनों की समाप्ति

- शिक्षा, रोजगार और संसाधनों के माध्यम से वंचितों का सशक्तिकरण

अंबेडकर का दृष्टिकोण उदार अर्थशास्त्र और समाजवादी कल्याणवाद दोनों से प्रेरित था।

2. भूमि सुधार और कृषि अर्थव्यवस्था

भारत की अर्थव्यवस्था उस समय कृषि प्रधान थी। अंबेडकर ने जाति आधारित भूमि स्वामित्व की असमान संरचना को उजागर किया।

उनके विचार:

- कृषि भूमि के राष्ट्रीयकरण की वकालत की।

- राज्य नियंत्रण में सामूहिक खेती का प्रस्ताव दिया।

- किसानों और भूमिहीन मजदूरों के लिए किरायेदारी सुधार पर ज़ोर दिया।

- भूमि का स्वामित्व राज्य के पास हो लेकिन किसान उसे लीज़ पर जोतें।

इन सुधारों का उद्देश्य सामाजिक समानता स्थापित करना और कृषि उत्पादन को बढ़ाना था।

3. औद्योगिकीकरण और राज्य-नियंत्रित विकास

अंबेडकर ने औद्योगिकीकरण को आर्थिक विकास का आधार माना और इसे जातिवाद को समाप्त करने का साधन बताया।

मुख्य बिंदु:

- भारी उद्योगों के विकास में राज्य की अग्रणी भूमिका की वकालत की।

- शहरीकरण और फैक्ट्री-आधारित रोजगार से जातिगत भेदभाव को कम करने की बात कही।

- तकनीकी शिक्षा और कौशल विकास पर ज़ोर दिया।

- औद्योगिकीकरण को बेरोजगारी और ग्रामीण गरीबी दूर करने का उपाय बताया।

उन्होंने मिश्रित अर्थव्यवस्था का समर्थन किया जिसमें राज्य की केंद्रीय भूमिका हो।

4. रुपया की समस्या और मौद्रिक नीति

उनकी प्रसिद्ध पुस्तक “The Problem of the Rupee: Its Origin and Its Solution” (1923) भारतीय मुद्रा प्रणाली पर एक ऐतिहासिक और व्यावहारिक विश्लेषण है।

मुख्य योगदान:

- ब्रिटिश भारत द्वारा अपनाए गए गोल्ड एक्सचेंज स्टैंडर्ड की आलोचना की।

- स्थिर मुद्रा मूल्य के लिए गोल्ड स्टैंडर्ड अपनाने की सिफारिश की।

- मूल्य स्थिरता (Price Stability) को मौद्रिक नीति का प्राथमिक उद्देश्य बताया।

- केंद्रीय बैंक की आवश्यकता जताई—जिसने बाद में भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI) की स्थापना को प्रेरित किया।

5. श्रमिक अधिकार और सामाजिक कल्याण

1942–46 के बीच वायसराय की कार्यकारी परिषद में श्रम मंत्री के रूप में अंबेडकर ने कई महत्वपूर्ण श्रम सुधार किए।

प्रमुख सुधार:

- काम के घंटे 12 से घटाकर 8 किए।

- सवेतन अवकाश, मातृत्व लाभ, और स्वास्थ्य बीमा लागू किया।

- समान कार्य के लिए समान वेतन की शुरुआत की।

- यूनियन बनाने का अधिकार और श्रमिक शिकायत निवारण प्रणाली को मजबूत किया।

- सामाजिक सुरक्षा और पेंशन प्रणाली का समर्थन किया।

इन सभी सुधारों ने भारत की श्रम नीति की नींव रखी।

6. सार्वजनिक वित्त और राजकोषीय संघवाद

अपने शोध "The Evolution of Provincial Finance in British India" में अंबेडकर ने ब्रिटिश भारत की राजस्व व्यवस्था की आलोचना की।

मुख्य विचार:

- राजकोषीय विकेंद्रीकरण (Fiscal Decentralization) की वकालत की।

- प्रांतों को वित्तीय स्वायत्तता देने की बात कही।

- राजस्व वितरण में न्याय सुनिश्चित करने की आवश्यकता जताई।

- इनके विचार भारतीय संविधान के राजकोषीय संघवाद (Fiscal Federalism) में झलकते हैं।

7. जाति और आर्थिक असमानता

अंबेडकर ने जाति को केवल सामाजिक नहीं, बल्कि आर्थिक संस्था के रूप में भी विश्लेषित किया।

उनका विश्लेषण:

- जाति व्यवस्था ने श्रम बाजार में गतिशीलता को रोका।

- दलितों को शिक्षा और कौशल से वंचित कर गरीबी के चक्र में फंसाया गया।

- प्रतिभा का दमन और आर्थिक क्षमता की बर्बादी हुई।

- उन्होंने आरक्षण और सकारात्मक भेदभाव (affirmative action) का समर्थन किया।

उनके लिए आर्थिक मुक्ति, सामाजिक मुक्ति के बिना अधूरी थी।

8. जल संसाधन प्रबंधन और आधारभूत संरचना

अंबेडकर ने बड़े पैमाने पर बुनियादी ढांचे के विकास की वकालत की।

योगदान:

- दामोदर घाटी परियोजना का प्रारंभ किया, जो अमेरिका की टेनेसी घाटी परियोजना से प्रेरित थी।

- सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण, और बिजली के लिए बहु-उद्देश्यीय नदी परियोजनाएं प्रस्तावित कीं।

- जल को उन्होंने आर्थिक और सामाजिक संसाधन दोनों माना।

उनका मानना था कि बुनियादी ढांचे का विकास भारत की आर्थिक तरक्की का आधार बनेगा।

9. कल्याणकारी राज्य की परिकल्पना

अंबेडकर ने एक ऐसे कल्याणकारी राज्य की कल्पना की जो प्रत्येक नागरिक को आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करे।

मुख्य विशेषताएं:

- राज्य की जिम्मेदारी हो शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार उपलब्ध कराना।

- अल्पसंख्यकों और अनुसूचित जाति/जनजाति की रक्षा के लिए विशेष प्रावधान हों।

- संविधान में राज्य के नीति निदेशक तत्व (DPSPs) के माध्यम से कल्याणकारी नीतियों को मार्गदर्शक बनाया।

- उन्होंने मानवीय गरिमा के साथ आर्थिक नैतिकता पर बल दिया।

निष्कर्ष (Conclusion)

डॉ. भीमराव अंबेडकर के आर्थिक विचार क्रांतिकारी और दूरदर्शी थे। उन्होंने आर्थिक तर्क को सामाजिक न्याय के साथ जोड़ा और एक समावेशी तथा न्यायपूर्ण समाज की कल्पना की।

आज के भारत में, जब हम असमानता, श्रमिक अधिकार, जातिगत बहिष्करण, और समावेशी विकास की चर्चा करते हैं, तब अंबेडकर के विचार पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक हो जाते हैं।

उनके लिए अर्थशास्त्र केवल उत्पादन और खपत का विषय नहीं था, बल्कि वह था गरिमा, समानता और सशक्तिकरण का माध्यम—इसीलिए वे केवल संविधान निर्माता नहीं, बल्कि एक महान आर्थिक विचारक भी थे।